UPSC Mains 2025

हल प्रश्न पत्र

सामान्य अध्ययन पेपर-I

C-171/2, Block-A, Sector-15, Noida

641, Mukherjee Nagar, Opp. Signature View Apartment, New Delhi

21, Pusa Road, Karol Bagh New Delhi

Tashkent Marg, Civil Lines, Prayagraj, Uttar Pradesh

Tonk Road, Vasundhra Colony, Jaipur, Rajasthan

Burlington Arcade Mall, Burlington Chauraha, Vidhan Sabha Marg, Lucknow

12, Main AB Road, Bhawar Kuan, Indore, Madhya Pradesh

E-mail : care@groupdrishti.in

Phone: +91-87501-87501

प्रश्न.1: जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के उद्देश्य से 'भ्रष्ट आचरण' की विवेचना कीजिये। विश्लेषण कीजिये कि क्या विधायकों एवं अथवा उनके सहयोगियों की आय के ज्ञात स्रोतों के विपरीत अनुपात में संपत्ति में वृद्धि 'असम्यक् असर' सृजित करता है और परिणामत: भ्रष्ट आचरण है। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अंतर्गत "भ्रष्ट आचरण" शब्द को परिभाषित कीजिये।
- **मुख्य भाग:** अधिनियम में परिभाषित विशिष्ट भ्रष्ट आचरणों पर प्रकाश डालिये तथा अनुचित प्रभाव एवं अनुपातहीन संपत्ति वृद्धि के संभावित भ्रष्ट आचरण की व्याख्या कीजिये।
- **निष्कर्ष:** तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 चुनाव के दौरान विभिन्न **भ्रष्ट आचरणों** को परिभाषित करता है ताकि चुनाव स्वतंत्र, निष्पक्ष और पारदर्शी रहें। इन आचरणों में **रिश्वतखोरी, अनुचित प्रभाव, धमकी, तथ्यों का अनुचित प्रस्तुतीकरण और धर्म, जाति या समुदाय** के आधार पर अपील शामिल हैं।

RPA, 1951 के अंतर्गत भ्रष्ट आचरण: इसकी धारा 123 के अंतर्गत भ्रष्ट आचरण को परिभाषित किया गया है जिससे चुनावों की निष्पक्षता प्रभावित हो सकती है

- **रिश्वतखोरी [धारा 123(1)]:** मतदाताओं की पसंद को प्रभावित करने के लिये धन या वस्तु की पेशकश करना।
- **अनुचित प्रभाव [धारा 123(2)]:** किसी उम्मीदवार द्वारा किया गया कोई भी कार्य जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसके चुनावी अधिकारों के स्वतंत्र प्रयोग में हस्तक्षेप करता है। इसमें मतदाताओं को धमकाना, ज़बरदस्ती करना या उन पर दबाव डालना शामिल हो सकता है।
- **जाति और पहचान की राजनीति का उपयोग [धारा 123(3)]: जाति, धर्म या भाषा** के पहचान की राजनीति के आधार पर वोट मांगना।
  - **SR बोम्मई बनाम भारत संघ (1994) मामले में सर्वोच्च न्यायालय** ने फैसला दिया कि धर्म को धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों के साथ नहीं मिलाया जा सकता है तथा इस बात पर ज़ोर दिया कि वोट हासिल करने के लिये धार्मिक या सांप्रदायिक पहचान का उपयोग करना धारा 123(3) के अंतर्गत **भ्रष्ट आचरण** है।
- **झूठे बयान [धारा 123(4)]:** चुनाव परिणामों को प्रभावित करने के उद्देश्य से झूठे बयानों का प्रकाशन।
  - **अनुग्रह नारायण सिंह बनाम हर्षवर्द्धन बाजपेयी (2022) मामले में सर्वोच्च न्यायालय** ने फैसला दिया कि किसी उम्मीदवार की शैक्षिक योग्यता के बारे में **गलत जानकारी** देना जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 123(4) के तहत भ्रष्ट आचरण नहीं माना जा सकता।

RPA, 1951 के तहत भ्रष्ट आचरण के निहितार्थ/चुनौतियाँ

- **चुनावी शुचिता को खतरा:** रिश्वतखोरी, अनुचित प्रभाव और छद्मवेश जैसी प्रथाएँ मतदाता की पसंद को विकृत करती हैं और स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनावों की नींव को कमज़ोर करती हैं।
- **सांप्रदायिक और सामाजिक ध्रुवीकरण:** चुनावी लाभ के लिये धर्म, जाति या भाषा की अपील सामाजिक विभाजन की सीमा को गहरा करती है, जो संविधान की पंथनिरपेक्ष भावना का उल्लंघन करती है।
- **राजनीति का अपराधीकरण:** झूठे बयान और अवैध गतिविधियों का प्रयोग प्राय: आपराधिक पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों करते हैं, जिससे राजनीति में अनैतिक प्रथाओं को बढ़ावा मिलता है।
- **कमज़ोर प्रवर्तन और न्यायिक विलंब:** चूँकि भ्रष्ट आचरण के आरोपों को केवल चुनावी याचिकाओं के माध्यम से ही न्यायालयों में चुनौती दी जा सकती है, इसलिये विलंब से जवाबदेही और निवारण कमज़ोर हो जाता है।

गैर-समानुपातिक परिसंपत्ति वृद्धि और अनुचित प्रभाव:

- **वैध संपत्ति बनाम भ्रष्ट संपत्ति:** यदि संपत्ति में वृद्धि वैध **व्यावसायिक उपक्रमों, विरासत या कानूनी निवेश** का परिणाम है, तो इसे अनुचित प्रभाव नहीं माना जाएगा।
  - हालाँकि यदि धन में वृद्धि चुनाव अभियानों के साथ मेल खाती है और **रिश्वतखोरी, वोट खरीदने या मतदाताओं** को प्रभावित करने या चुनाव जीतने के लिये **शक्ति का दुरुपयोग** करने के साक्ष्य हैं, तो यह **अनुचित प्रभाव** हो सकता है।
  - इस प्रकार की कार्रवाइयाँ **मतदाताओं** को **मजबूर करने या चुनावी लाभ** हासिल करने के लिये **अवैध धन** का उपयोग करके चुनावों की निष्पक्षता को विकृत करती हैं।
- कुछ मामलों में **असमान संपत्ति वृद्धि भ्रष्टाचार** का संकेत हो सकती है, मूलत: यदि **धन सरकारी अनुबंधों या अवैध गतिविधियों** से जुड़ा हो।
  - यदि इन परिसंपत्तियों का उपयोग मतदाताओं को प्रभावित करने या वोट सुरक्षित करने के लिये किया जाता है, तो इसे RPA, 1951 के तहत भ्रष्ट आचरण माना जा सकता है ।

- **RPA के अंतर्गत प्रकटीकरण आवश्यकताएँ:**
  - उम्मीदवारों को अपनी संपत्ति, देनदारियों और आय के स्रोतों का वर्णन करते हुए **हलफनामा (फॉर्म 26, चुनाव संचालन नियम, 1961)** दाखिल करना होगा।
  - **आवश्यक जानकारी का खुलासा न करना** या छिपाना **भ्रष्ट आचरण** के रूप में चुनौती दी जा सकती है (RPA की धारा 33, 33A, 125A से जुड़ा हुआ)।

RPA के दायरे की सीमाएँ:

- अनुपातहीन संपत्ति वृद्धि के सभी मामले RPA के अंतर्गत नहीं आते। RPA वहाँ लागू होता है, जहाँ चुनावों को प्रभावित करने के लिये अवैध धन का दुरुपयोग किया जाता है।
- भ्रष्टाचार और धन शोधन के मामलों से निपटने के लिये **भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988** और **धन शोधन निवारण अधिनियम (PMLA), 2002** भी कार्यान्वित है।

निष्कर्ष:

अनुग्रह नारायण सिंह बनाम हर्षवर्द्धन बाजपेयी (2022) और **SR बोम्मई बनाम भारत संघ (1994)** ममले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों ने अनुचित प्रभाव के दायरे को परिभाषित करने में मदद की है और यह दर्शाया है कि कैसे अनैतिक तरीकों से चुनावी शुचिता से समझौता किया जा सकता है। इसलिये चुनावों की पवित्रता बनाए रखने के लिये ऐसे कार्यों की लोक प्रतिनिधि अधिनियम, 1951 के विधिक ढाँचे के तहत जाँच की जानी चाहिये।

प्रश्न 2: न्यायालय पद्धति की तुलना में प्रशासनिक अधिकरणों की आवश्यकता पर टिप्पणी कीजिये। 2021 में अधिकरणों के बुद्धिपरक पुनर्गठन द्वारा किये गए नूतन अधिकरण सुधारों के प्रभाव का मूल्यांकन कीजिये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** प्रशासनिक अधिकरणों की आवश्यकता और पारंपरिक न्यायालय प्रणाली का विकल्प प्रदान करने में उनकी भूमिका का परिचय लिखिये।
- **मुख्य भाग:** न्यायालय प्रणाली की तुलना में प्रशासनिक अधिकरणों की आवश्यकता और लाभों पर चर्चा कीजिये और युक्तीकरण प्रक्रिया सहित वर्ष 2021 के अधिकरण सुधारों के प्रभाव का मूल्यांकन कीजिये।
- **निष्कर्ष:** अधिकरण सुधारों के प्रभाव और प्रशासनिक न्याय प्रणाली में सुधार हेतु उनकी क्षमता का सारांश प्रस्तुत करते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: प्रशासनिक अधिकरण विशिष्ट **अर्द्ध-न्यायिक निकाय (अनुच्छेद 323A)** हैं, जिन्हें **विशिष्ट प्रशासनिक डोमेन** के भीतर उत्पन्न होने वाले विवादों और मुद्दों से निपटने के लिये डिज़ाइन किया गया है, जो प्राय: **लोक सेवा, कर या नियामक मामलों** से संबंधित होते हैं। उनकी आवश्यकता **पारंपरिक न्यायालय प्रणाली** की सीमाओं से उत्पन्न हुई, जो प्राय: **अत्यधिक बोझ से दबी** है और ऐसे विशिष्ट मामलों को कुशलतापूर्वक सँभालने के लिये विशेषज्ञता का अभाव रखती है।

प्रशासनिक अधिकरणों की आवश्यकता:

- **विशिष्ट क्षेत्राधिकार:** प्रशासनिक अधिकरणों को **कराधान, श्रम विवाद और सेवा मामलों** जैसे क्षेत्रों में विवादों को संबोधित करने के लिये डिज़ाइन किया गया है।
  - उदाहरण के लिये **केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (CAT)** सरकारी सेवा से संबंधित मामलों से निपटता है, जिसके लिये प्रशासनिक नियमों और विनियमों का ज्ञान आवश्यक है।
- **दक्षता और गति:** भारतीय न्यायपालिका मामलों के भारी बोझ से जूझ रही है, नियमित न्यायालयों (Regular Courts) में लाखों मामले लंबित हैं। प्रशासनिक अधिकरणों की स्थापना विशिष्ट प्रकार के मामलों को निपटाकर न्यायालयों पर बोझ कम करने के लिये की गई थी।
  - **अधिकरण न्यायनिर्णयन** को सुव्यवस्थित करते हैं तथा पक्षकारों को न्याय पाने का अधिक त्वरित तरीका प्रदान करते हैं, विशेष रूप से उन विशिष्ट क्षेत्रों में जहाँ न्यायिक निकाय की विशेषज्ञता प्रक्रिया को तीव्र कर सकती है।
- **लागत-प्रभावशीलता:** सरल कानूनी प्रक्रिया व्यापक और जटिल कानूनी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता को कम करती है तथा तकनीकी विवादों में शामिल व्यक्तियों एवं व्यवसायों के लिये न्याय तक पहुँच को अधिक किफायती बनाती है।

अधिकरण सुधार, 2021 और इसका प्रभाव

- **नियुक्तियों में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका:** वर्ष 2021 के सुधार में सर्च-कम-सिलेक्शन कमेटी में बदलाव का प्रस्ताव है, जो अधिकरण के सदस्यों की नियुक्ति के लिये ज़िम्मेदार होगी।
  - समिति में **भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI)** या सर्वोच्च न्यायालय के नामित न्यायाधीश, सरकार के सदस्य और निवर्तमान अधिकरण अध्यक्ष शामिल होंगे।
  - **प्रभाव:** न्यायिक जाँच के माध्यम से **नियुक्ति प्रक्रिया** बेहतर जवाबदेही की ओर ले जा सकती है।

- **अधिकरणों का युक्तीकरण और समेकन:** सुधारों का उद्देश्य कई अधिकरणों को युक्तीकरण और समेकित करना था ताकि अतिव्यापन को कम किया जा सके और प्रणाली को अधिक कुशल बनाया जा सके।
    - समान कार्य वाले अधिकरणों, जैसे–**विद्युत अपीलीय अधिकरण** और **दूरसंचार विवाद निपटान एवं अपीलीय न्यायाधिकरण** का विलय कर दिया गया, ताकि अतिरेक को कम किया जा सके और परिचालन दक्षता में सुधार किया जा सके।
    - **प्रभाव:** अधिकरणों के **युक्तीकरण** और **एकीकरण** से शीघ्र न्यायनिर्णयन होने की उम्मीद है, विशेष रूप से अतिव्यापी क्षेत्रों में जहाँ एक ही प्रकार के विवाद के लिये कई मंच हैं।
- **प्रशासनिक प्रक्रियाओं को सुदृढ़ बनाना:** सुधारों ने अधिकरणों की संरचना और कार्यप्रणाली को सुव्यवस्थित करने के लिये प्रावधान पेश किये जिसमें सदस्यों के लिये पद की शर्तें, उनकी योग्यताएँ और **निष्कासन** प्रक्रियाएँ शामिल हैं।
    - **प्रभाव:** इससे अधिकरण के निर्णयों में अधिक जवाबदेही और व्यावसायिकता सुनिश्चित हो सकेगी।
- **गैर-निष्पादित आस्तियों (NPA) के लिये अधिकरण का संचालन:** वर्ष 2021 के सुधारों ने वित्तीय क्षेत्र के मुद्दों, जैसे–गैर-निष्पादित आस्तियों (NPA) से संबंधित विवादों को सँभालने के लिये विशेष अधिकरणों की भी शुरुआत की, जिसका उद्देश्य बैंकिंग क्षेत्र में एक विशेष समाधान तंत्र का निर्माण करना है।
- **प्रभाव:** ये सुधार प्रशासनिक न्याय तक **पहुँच** को बढ़ा सकते हैं, विशेष रूप से **बैंकिंग, कराधान और श्रम** जैसे क्षेत्रों में।

निष्कर्ष:

यद्यपि अधिकरण संबंधी सुधार वर्ष 2021की अधिकरण प्रणाली को और अधिक प्रभावी बनाने की दिशा में आशाजनक हैं, फिर भी दीर्घावधि में निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिये कार्यपालिका नियंत्रण और स्वतंत्रता से संबंधित चुनौतियों का समाधान अभी भी आवश्यक है। ये सुधार प्रशासनिक मामलों के लिये एक सुदृढ़, सुलभ और विशिष्ट न्यायिक प्रणाली बनाने की दिशा में एक सकारात्मक कदम हैं।

प्रश्न 3: भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में क्षमा करने की राष्ट्रपति की शक्ति की तुलना कीजिये तथा विषमताओं को स्पष्ट कीजिये। क्या दोनों देशों में इसकी कोई सीमाएँ हैं? 'अग्रिम माफी' क्या होती है? (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** भारत और अमेरिका के राष्ट्रपति की क्षमादान शक्तियों की अवधारणा का परिचय लिखिये और उनके संवैधानिक आधार पर बल दीजिये।
- **मुख्य भाग:** भारत और अमेरिका की प्री-एम्प्टिव पार्डन में तुलना और अंतर स्पष्ट कीजिये, संवैधानिक प्रावधानों, दायरे, सीमाओं और पूर्व-क्षमादान की अवधारणा पर चर्चा कीजिये।
- **निष्कर्ष:** दोनों प्रणालियों के बीच प्रमुख समानताओं और अंतरों का निष्कर्ष लिखिये और पूर्व-क्षमादान के निहितार्थों पर चर्चा कीजिये।

परिचय:

क्षमादान की शक्ति एक महत्त्वपूर्ण कार्यकारी भूमिका है, जो राष्ट्राध्यक्ष को न्यायिक मामलों में दया का प्रयोग करने की अनुमति देता है। **भारत के राष्ट्रपति** और **संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति**, दोनों के पास क्षमादान देने का अधिकार है, लेकिन इस शक्ति की प्रकृति और दायरा दोनों देशों में काफी भिन्न है।

भारतीय राष्ट्रपति की क्षमादान की शक्ति:

- **संवैधानिक प्रावधान: भारतीय संविधान** के **अनुच्छेद 72** के तहत **भारत के राष्ट्रपति को क्षमा, प्रलंबन, विराम और दंड** में छूट देने की शक्ति प्राप्त है।
    - इस शक्ति का प्रयोग **सैन्य न्यायालय संबंधी सज़ा, संघीय कानूनी अपराध** और **मृत्युदंड** से संबंधित मामलों में किया जा सकता है।
- **दायरा और अनुप्रयोग:** राष्ट्रपति संघीय कानून के तहत अपराधों के लिये दोषी ठहराए गए व्यक्तियों को क्षमा प्रदान कर सकते हैं, जिसमें मृत्युदंड प्राप्त या सैन्य न्यायालयों द्वारा मुकदमा चलाए गए व्यक्ति भी शामिल हैं।
- **सीमाएँ:** राष्ट्रपति को **मंत्रिमंडल की सलाह पर** कार्य करना होगा, यद्यपि यह शक्ति विवेकाधीन है। यह **न्यायिक समीक्षा** के अधीन है, विशेषकर यदि निर्णय मनमाने या भेदभावपूर्ण हों।

प्री-एम्प्टिव पार्डन:

- भारत में दोषसिद्धि से पहले '**प्री-एम्प्टिव पार्डन**' आमतौर पर नहीं दी जाती। क्षमादान आमतौर पर **दोषसिद्धि के बाद** दिया जाता है। राष्ट्रपति की शक्ति **मंत्रिमंडल की सलाह के अधीन** होती है।

अमेरिकी राष्ट्रपति की क्षमादान शक्ति:

- **संवैधानिक प्रावधान:** अमेरिकी संविधान राष्ट्रपति को महाभियोग के मामलों को छोड़कर, अनुच्छेद II, खंड 2 के तहत संघीय अपराधों के लिये क्षमादान की शक्ति प्रदान करता है।

  - यह शक्ति **व्यापक और विवेकाधीन** है, जिसका अर्थ है कि राष्ट्रपति बिना कोई कारण या स्पष्टीकरण दिये किसी व्यक्ति को क्षमा कर सकते हैं।
- **दायरा और अनुप्रयोग:** अमेरिकी राष्ट्रपति संघीय अपराधों के लिये किसी भी स्तर पर क्षमादान दे सकते हैं: **अभियोजन से पहले, मुकदमे के दौरान या दोषसिद्धि के बाद। क्षमादान से सज़ा रद्द** हो जाती है, लेकिन आपराधिक रिकॉर्ड नहीं मिटता या निर्दोषता का संकेत नहीं मिलता।
- **सीमाएँ:** राष्ट्रपति केवल **संघीय अपराधों** को क्षमा कर सकते हैं, **राज्य अपराधों को क्षमा नहीं कर सकते।**
  - यह शक्ति **महाभियोग** के मामलों तक विस्तारित नहीं होती है।
- **न्यायिक निरीक्षण:** राष्ट्रपति की क्षमादान शक्ति की कोई प्रत्यक्ष औपचारिक **न्यायिक समीक्षा** नहीं है, यद्यपि इसका प्रयोग **सार्वजनिक और राजनीतिक जाँच के अधीन** हो सकता है।

प्री-एम्प्टिव पार्डन:

- **प्री-एम्प्टिव पार्डन** जाँच, **मुकदमे या दोषसिद्धि से पहले** दी जाती है, जिसमें उन संभावित पूर्व कृत्यों को शामिल किया जाता है जिन पर बाद में आरोप लग सकते हैं। यह शक्ति **संविधान के अनुच्छेद II, खंड 2** से प्राप्त होती है, जो केवल संघीय अपराधों पर लागू होती है।
- सबसे प्रसिद्ध मामला **वर्ष 1974** में वाटरगेट कांड के बाद **गेराल्ड फोर्ड द्वारा रिचर्ड निक्सन को क्षमादान** देने का था।
- यद्यपि यह राजनीतिक रूप से विवादास्पद है, फिर भी यह **राज्य अपराधों** पर लागू नहीं हो सकता।

भारत और अमेरिका में राष्ट्रपति की क्षमादान शक्तियों के बीच प्रमुख अंतर

विषय	भारत	अमेरिका
क्षमादान शक्ति का दायरा	सैन्य न्यायालय संबंधी मामलों, संघीय कानूनी अपराधों और मृत्युदंड के लिये क्षमादान।	केवल संघीय अपराधों के लिये क्षमादान।
परामर्श	राष्ट्रपति को **मंत्रिमंडल की सलाह** पर कार्य करना होगा।	राष्ट्रपति के पास **विवेकाधीन शक्तियाँ** हैं और उन्हें सलाह की आवश्यकता नहीं है।
प्री-एम्प्टिव पार्डन	**नहीं दिया जा सकता है:** आमतौर पर दोषसिद्धि के बाद दिया जाता है।	**दिया जा सकता है:** ऐतिहासिक रूप से दिया गया है (उदाहरण के लिये फोर्ड द्वारा निक्सन को क्षमादान)।
न्यायिक समीक्षा	निरंकुश मामलों में **राष्ट्रपति का निर्णय न्यायिक समीक्षा** के अधीन होता है।	कोई **औपचारिक न्यायिक समीक्षा नहीं** होती, हालाँकि राजनीतिक अन्वेषण होता है।
रिकॉर्ड पर प्रभाव	क्षमा से दोषसिद्धि या आपराधिक रिकॉर्ड समाप्त नहीं होता।	क्षमा से दोषसिद्धि समाप्त नहीं होती, बल्कि सज़ा रद्द हो जाती है।

निष्कर्ष:

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में **राष्ट्रपति की क्षमादान शक्तियाँ** दया करने, न्यायिक त्रुटियों को सुधारने और न्याय को बढ़ावा देने में समान उद्देश्यों की पूर्ति करती हैं, लेकिन उल्लेखनीय अंतर यह है कि भारत में **राष्ट्रपति की क्षमादान की शक्ति** परामर्श के अधीन है और आमतौर पर दोषसिद्धि के बाद प्रयोग की जाती है, जबकि **संयुक्त राज्य अमेरिका** में राष्ट्रपति के पास एकतरफा विवेकाधिकार होता है और वह संघीय अपराधों के लिये क्षमादान जारी कर सकता है, जिसमें प्री-एम्प्टिव पार्डन भी शामिल है।

प्रश्न 4: जम्मू-कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 के बाद, जम्मू-कश्मीर विधानसभा की प्रकृति का विवेचन कीजिये। केंद्रशासित प्रदेश जम्मू-कश्मीर की विधानसभा की शक्तियों तथा कार्यों का संक्षेप में वर्णन कीजिये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** जम्मू एवं कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 का परिचय लिखिये और जम्मू एवं कश्मीर को केंद्रशासित प्रदेश में बदलने से क्षेत्र पर पड़ने वाले इसके प्रभाव की व्याख्या कीजिये।
- **मुख्य भाग:** पुनर्गठन अधिनियम से पहले और बाद में जम्मू और कश्मीर विधानसभा के स्वरूप पर चर्चा कीजिये। इसकी शक्तियों और कार्यों का वर्णन कीजिये।
- **निष्कर्ष:** तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: जम्मू एवं कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 ने इस क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किया, जिससे इसका **दर्जा एक राज्य से केंद्रशासित प्रदेश (UT)** का हो गया। इस बदलाव के अंतर्गत जम्मू एवं कश्मीर को एक विधानसभा के रूप में स्थापित किया गया, जिसके द्वारा इस केंद्रशासित प्रदेश के शासन का संचालन होता है। **अनुच्छेद 370 के निरस्त होने के बाद यह पहला ऐसा चुनाव** है, जिससे संवैधानिक और प्रशासनिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं।

जम्मू एवं कश्मीर विधानसभा की प्रकृति:

- **अनुच्छेद 370 के निरस्त होने के बाद परिवर्तन:** जम्मू एवं कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 ने राज्य को दो केंद्रशासित प्रदेशों में विभाजित कर दिया: **जम्मू एवं कश्मीर (विधानसभा के साथ) और लद्दाख (विधानसभा के बिना)।**
  - इस अधिनियम ने **जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्जा भी हटा दिया** तथा भारतीय संविधान को पूरी तरह से इस क्षेत्र पर लागू कर दिया।

जम्मू-कश्मीर विधानसभा की शक्तियाँ और कार्य

- **शासन या विधायी शक्ति:** नवीन केंद्रशासित प्रदेश के दर्जे के तहत जम्मू एवं कश्मीर का शासन दिल्ली और पुदुचेरी के मॉडल जैसा है, जहाँ विधानसभा भी है।
  - **अधिनियम की धारा 32** के अनुसार जम्मू और कश्मीर विधानसभा **राज्य सूची** (लोक व्यवस्था और पुलिस को छोड़कर) और समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बना सकती है।
- **वित्तीय शक्तियाँ:** किसी भी वित्तीय विधेयक या बजट को विधानसभा में पेश करने से पहले उपराज्यपाल की पूर्व सिफारिश की आवश्यकता होती है, जिससे उपराज्यपाल को वित्तीय मामलों पर नियंत्रण प्राप्त होता है।
- **LG की शक्तियाँ:** LG के पास **लोक व्यवस्था, पुलिस** और विधानसभा के अधिकार क्षेत्र से बाहर के मामलों पर पर्याप्त अधिकार हैं।
  - उपराज्यपाल को **भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो** और **अखिल भारतीय सेवाओं** जैसे क्षेत्रों में स्वतंत्र रूप से कार्य करने का विवेकाधिकार भी प्राप्त है, जिससे क्षेत्रीय शासन पर उनका प्रभाव व्यापक होता है।
  - उपराज्यपाल के पास **महाधिवक्ता** और **विधि अधिकारियों** समेत प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति करने तथा अभियोजन और प्रतिबंधों से संबंधित निर्णय लेने का भी अधिकार है।
  - केंद्रीय गृह मंत्रालय के अनुसार, LG निर्वाचित सरकार की सहायता और सलाह के बिना **जम्मू-कश्मीर विधानसभा में 5 सदस्यों** को नामित कर सकते हैं, इसे एक वैधानिक कार्य माना जाएगा; यह मामला वर्तमान में **जम्मू-कश्मीर उच्च न्यायालय** (2025) में विचाराधीन है।

निष्कर्ष:

वर्ष 2019 के बाद जम्मू-कश्मीर विधानसभा की शक्तियाँ पूर्ण राज्यों की तुलना में काफी सीमित हो गई हैं। विधानसभा कई विषयों पर कानून बना सकती है, हालाँकि कानून-व्यवस्था और वित्तीय मामलों जैसे प्रमुख क्षेत्र उपराज्यपाल के नियंत्रण में रखे गए हैं। यह संरचना दिल्ली के समान एक मॉडल को दर्शाती है, जहाँ **उपराज्यपाल** एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, **विधायी स्वायत्तता** और **केंद्रीय नियंत्रण के बीच संतुलन** बनाते हैं।

प्रश्न 5: भारत का महान्यायवादी (एटर्नी जनरल) केंद्र सरकार के कानूनी ढाँचे का मार्गदर्शन करने और कानूनी परामर्श के माध्यम से ठोस शासन सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।" इस संबंध में उसकी जिम्मेदारियों, अधिकारों और सीमाओं का विवेचन कीजिये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** भारत के महान्यायवादी (AG) की भूमिका और केंद्र सरकार के कानूनी ढाँचे में उनके महत्त्व का परिचय लिखिये।
- **मुख्य भाग:** महान्यायवादी के दायित्वों, अधिकारों और सीमाओं पर विस्तार से चर्चा कीजिये।
- **निष्कर्ष:** तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: भारत के महान्यायवादी (AGI) केंद्र सरकार के प्रमुख कानूनी सलाहकार होता है, जिन्हें संविधान के **अनुच्छेद 76** के तहत भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। महान्यायवादी कानूनी मामलों पर सरकार को सलाह देने, अदालतों में उसका प्रतिनिधित्व करने और संविधान के अनुसार कानूनी शासन सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारत के महान्यायवादी (AGI) की ज़िम्मेदारियाँ

- **विधिक परामर्शदाता (अनुच्छेद 76):** राष्ट्रपति द्वारा प्रेषित विधिक मामलों पर केंद्र सरकार को सलाह देता है, जिसमें सरकारी हितों से संबंधित मामले भी शामिल हैं।
- **अनुच्छेद 143 के तहत प्रतिनिधित्व:** सार्वजनिक महत्त्व के विधिक प्रश्नों पर अनुच्छेद 143 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को भेजे गए मामलों में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करता है।
- **संवैधानिक कार्य:** संविधान या कानूनों द्वारा प्रदत्त कार्यों का निष्पादन करना, जिसमें **विधिक प्रारूप** तैयार करना और महत्त्वपूर्ण मामलों में उपस्थित होना शामिल है।

भारत के महान्यायवादी के अधिकार और सीमाएँ

महान्यायवादी के अधिकार	महान्यायवादी की सीमाएँ
संसदीय चर्चा में भाग लेने का अधिकार (अनुच्छेद 88): भारत के महान्यायवादी को संसद के किसी भी सदन, किसी संयुक्त बैठक या किसी भी संसदीय समिति, जिसके वे सदस्य हों, की कार्यवाही में **बोलने** और भाग लेने **का अधिकार** है, लेकिन वे मतदान करने के हकदार नहीं हैं।	**मतदान का अधिकार नहीं:** यद्यपि महान्यायवादी चर्चा में भाग ले सकते हैं, लेकिन वे मतदान नहीं कर सकते, जिससे उनकी भूमिका सलाहकार कार्यों तक ही सीमित हो जाती है।
सरकारी दस्तावेज़ों तक पहुँच: महान्यायवादी को केंद्र सरकार को कानूनी सलाह देने के लिये सरकारी दस्तावेज़ों तक पहुँच प्राप्त करने का अधिकार है।	**सरकार के निर्देशों पर निर्भरता:** महान्यायवादी के कार्य केंद्र सरकार की नीतियों के अंतर्गत आते हैं, जिससे उनकी स्वतंत्रता सीमित हो जाती है।
सुनवाई का अधिकार: महान्यायवादी को भारत के **किसी भी न्यायालय में उपस्थित होने और सुनवाई का अधिकार** है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि केंद्र सरकार के कानूनी हितों का सभी न्यायिक स्तरों पर प्रतिनिधित्व किया जाता है।	**नो प्राइवेट प्रैक्टिस:** हितों के टकराव से बचने के लिये महान्यायवादी को विधिक मामलों में निजी मुवक्किलों का प्रतिनिधित्व करने से प्रतिबंधित किया गया है। महान्यायवादी ऐसे मामलों में सलाह नहीं दे सकते या उनका प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते जहाँ उनके व्यक्तिगत या वित्तीय हित हों, जिससे निष्पक्षता सुनिश्चित होती है।
संसदीय विशेषाधिकार: महान्यायवादी को संसद सदस्यों के समान विशेषाधिकार प्राप्त हैं, जिससे वह स्वतंत्र रूप से और प्रतिशोध के भय के बगैर अपने कर्त्तव्यों का निर्वहन कर सकते हैं।	**हितों का टकराव:** संवैधानिक रूप से निष्पक्ष होने के बावजूद महान्यायवादी को प्रायः कार्यपालिका द्वारा उनकी नियुक्ति के कारण सत्तारूढ़ दल के साथ संबद्ध माना जाता है।

निष्कर्ष:

भारत के महान्यायवादी संघ सरकार की कार्यवाहियों की विधिक शुचिता सुनिश्चित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। न्यायालय में प्रतिनिधित्व और विधिक परामर्श जैसे अधिकारों का उपभोग करते हुए भी महान्यायवादी के कर्त्तव्यों को इस प्रकार संतुलित किया गया है कि हितों के टकराव से बचा जा सके और पद की निष्पक्षता एवं शुचिता संरक्षित रहे।

प्रश्न 6. महिलाओं की सामाजिक पूँजी सशक्तीकरण और लैंगिक समानता को आगे बढ़ाने में सहायक है। समझाइये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:
- **परिचय:** सामाजिक पूंजी को परिभाषित कीजिये और महिला सशक्तीकरण एवं लैंगिक समानता में इसकी प्रासंगिकता बताइये।
- **मुख्य भाग:** स्वयं सहायता समूहों, लखपति दीदी पहल और उनके प्रभाव पर ध्यान केंद्रित करते हुए सशक्तीकरण एवं समानता को बढ़ावा देने में महिलाओं की सामाजिक पूंजी की भूमिका पर चर्चा कीजिये।
- **निष्कर्ष:** सामाजिक-आर्थिक विकास में महिलाओं की सामाजिक पूंजी के महत्त्व को बताते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: महिलाओं की **सामाजिक पूंजी** से तात्पर्य उन नेटवर्कों, संबंधों एवं विश्वास से है, जिन्हें महिलाएँ अपने समुदायों में निर्मित करती हैं और जिसका **व्यक्तिगत सशक्तीकरण तथा लैंगिक समता** दोनों में योगदान होता है। सामाजिक पूंजी के माध्यम से महिलाओं का सशक्तीकरण आर्थिक स्वतंत्रता, निर्णय लेने की शक्ति और सामूहिक कार्यवाही को प्रोत्साहित करता है, जो लैंगिक असमानता को कम करने के लिये अत्यंत आवश्यक है।

- **महिलाओं की सामाजिक पूंजी के निर्माण में स्वयं सहायता समूह की भूमिका:** स्वयं सहायता समूह (SHG) महिलाओं के लिये संसाधन जुटाने, उनके वित्तीय समावेशन को बढ़ाने और ज्ञान साझाकरण हेतु एक मंच के रूप में कार्य करते हैं।
  - ये नेटवर्क **विश्वास** और **एकजुटता** को बढ़ावा देते हैं, जो सामाजिक पूंजी के महत्त्वपूर्ण घटक हैं जो महिलाओं को घरेलू, सामुदायिक और यहाँ तक कि **राजनीतिक** स्तर की **निर्णयन प्रक्रियाओं** में भाग लेने की अनुमति देते हैं ।
  - केरल में **कुदुंबश्री** और **महाराष्ट्र में महिला आर्थिक विकास महामंडल** जैसे स्वयं सहायता समूह यह दर्शाते हैं कि किस प्रकार सामाजिक पूंजी महिलाओं को स्थानीय शासन को प्रभावित करने और संसाधनों तक प्रभावी पहुँच बनाने में सक्षम बना सकती है।
- **आर्थिक स्वतंत्रता के माध्यम से सशक्तीकरण: लखपति दीदी कार्यक्रम** जैसी पहल, जिसका लक्ष्य **3 करोड़ लखपति दीदी** बनाना है, प्रत्यक्ष रूप से महिलाओं की **आर्थिक आत्मनिर्भरता** से जुड़ी हुई है।
  - **वार्षिक रूप से 1 लाख रुपए** कमाकर ये महिलाएँ न केवल परिवार कल्याण में योगदान देती हैं, बल्कि अपने घरों और समुदायों में निर्णय लेने का **अधिकार भी प्राप्त** करती हैं।
  - इस प्रकार की पहलें **बाज़ार आधारित गतिविधियों** में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के व्यापक प्रयासों का हिस्सा हैं, जिससे **उनकी सामाजिक पूंजी** बढ़ेगी और ग्रामीण भारत में **लैंगिक समता** में सुधार होगा।
- **सामाजिक पूंजी और लैंगिक समानता के बीच संबंध: सामाजिक पूंजी सामूहिक कार्रवाई** को बढ़ावा देती है, जिससे महिलाएँ अपने समुदायों में **घरेलू हिंसा, बाल विवाह और शिक्षा** जैसे **सामाजिक मुद्दों** को संबोधित करने में सक्षम होती हैं।
  - **सहकारी प्रयासों** के माध्यम से स्वयं सहायता समूह लैंगिक-संवेदनशील नीतियों का समर्थन करते हैं और **स्थानीय शासन संरचनाओं** से जवाबदेही की मांग करते हैं, जिससे **सरपंच** या **प्रधान** जैसी नेतृत्वकारी भूमिकाओं में महिलाओं को अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है।
  - अध्ययनों से पता चलता है कि स्वयं सहायता समूहों में जितनी अधिक **भागीदारी** होगी **सामाजिक पूंजी का संचय** उतना ही अधिक होगा, जो बेहतर **आर्थिक** और **सामाजिक सशक्तीकरण** से संबंधित है।
- **संस्थागत समर्थन और नेटवर्किंग: दीनदयाल अंत्योदय योजना - राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन** (DAY-NRLM) जैसे कार्यक्रम, स्किल इंडिया जैसी सरकारी योजनाएँ प्रशिक्षण और बाज़ार संपर्क प्रदान करती हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की सामाजिक पूंजी में वृद्धि होती है।
  - **महिला उद्यमियों** को बैंकों, **सरकारी योजनाओं** और **बाज़ार के अवसरों** से जोड़कर ये पहल महिलाओं के **सामाजिक नेटवर्क** और **आर्थिक स्थिति** को और मज़बूत करती हैं।

महिलाओं की सामाजिक पूंजी की राह में चुनौतियाँ

- **राजनीति में छद्म प्रतिनिधित्व:** 73वें संशोधन के तहत 33% आरक्षण के बावजूद कई महिला सरपंच नाममात्र प्रमुख के रूप में कार्य करती हैं, जबकि वास्तविक शक्ति उनके पुरुष संबंधियों के पास होती है।
- **हाशियाकरण:** दलित, जनजातीय और अल्पसंख्यक समुदायों की महिलाओं को जाति, वर्ग और लैंगिक कारणों की वजह से नुकसान का सामना करना पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप प्राय: संसाधनों का आवंटन कम होता है और संस्थागत समर्थन कमज़ोर होता है।
- **पितृसत्तात्मक मानदंड और सीमित गतिशीलता:** कई उत्तरी राज्यों में, विशेष रूप से खाप-प्रधान क्षेत्रों में, महिलाओं को संपर्कता और निर्णय लेने पर प्रतिबंधों का सामना करना पड़ता है, जिससे उनकी सामाजिक भागीदारी कम हो जाती है।
- **सांस्कृतिक एवं अनौपचारिक बाधाएँ:** समाज में गहराई से समाहित रूढ़िवादिता और वर्जनाएँ महिलाओं को नेतृत्वकारी भूमिका निभाने या सार्वजनिक मंचों पर स्वतंत्र रूप से भाग लेने से हतोत्साहित करती हैं।
- **डिजिटल विभाजन:** प्रौद्योगिकी और डिजिटल प्लेटफॉर्मों तक सीमित पहुँच महिलाओं के साथ जुड़ने, संगठित होने और शासन प्रक्रियाओं में शामिल होने की क्षमता को और कम कर देती है।

आगे की राह

- **सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन:** लैंगिक रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिये जागरूकता अभियान और सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देना।
- **शिक्षा और कौशल में निवेश करना:** कौशल अंतराल को समाप्त करने के लिये विज्ञान ज्योति, PMKVY और STEM मेंटरशिप जैसी योजनाओं का विस्तार करना।
- **कानून एवं सुरक्षा तंत्र को मज़बूत करना:** वन स्टॉप सेंटर, हेल्पलाइनों का विस्तार करना तथा फास्ट-ट्रैक कोर्ट के माध्यम से त्वरित न्याय सुनिश्चित करना।
- **आर्थिक समावेशन को बढ़ावा देना:** मुद्रा योजना, स्टैंड-अप इंडिया और समावेशी बैंकिंग मॉडल के माध्यम से महिला उद्यमियों को प्रोत्साहित करना।
- **राजनीतिक भागीदारी को गहन बनाना:** नेतृत्व प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण के साथ महिला आरक्षण अधिनियम का प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित करना।

निष्कर्ष:

महिलाओं की **सामाजिक पूंजी सशक्तीकरण** को आगे बढ़ाने और **लैंगिक समानता** हासिल करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। **स्वयं सहायता समूह** और **लखपति दीदी** कार्यक्रम जैसी पहलें दर्शाती हैं कि कैसे सहयोगी नेटवर्क महिलाओं के सशक्तीकरण में निहित बाधाओं को दूर करने, **आर्थिक आत्मनिर्भरता** को बढ़ावा देने और सामाजिक भागीदारी बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण हैं। ये प्रयास **लैंगिक असमानता** को दूर करने और एक समावेशी एवं **समतामूलक समाज** के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं।

प्रश्न 7. ई-गवर्नेंस परियोजनाओं में उपयोगकर्ता केंद्रित डिज़ाइनों की तुलना में प्रौद्योगिकी और बैक एंड एकीकरण के प्रति अंतर्निहित पूर्वाग्रह है। परीक्षण कीजिये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- ई-गवर्नेंस की अवधारणा और इसकी प्रौद्योगिकी-केंद्रित प्रकृति का संक्षेप में परिचय लिखिये।
- ई-गवर्नेंस में बैक-एंड इंटीग्रेशन के प्रति पूर्वाग्रह की समालोचनात्मक समीक्षा कीजिये, उदाहरण और तर्क प्रस्तुत कीजिये।
- उपयोगकर्त्ता-केंद्रित दृष्टिकोण के महत्त्व और उससे संबंधित चुनौतियों पर चर्चा कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: ई-गवर्नेंस परियोजनाएँ सामान्यत: प्रौद्योगिकी और डिजिटल ढाँचे का उपयोग करके लोक सेवा प्रदायगी को सुदृढ़ करने हेतु निर्मित की जाती हैं। हालाँकि प्राय: इनमें **बैक-एंड इंटीग्रेशन** और **प्रौद्योगिकी कार्यान्वयन** की ओर झुकाव पाया जाता है, जो कई बार उपयोगकर्त्ता-केंद्रित अभिकल्पना की उपेक्षा कर देता है। जबकि प्रभावी सहभागिता और सभी नागरिकों के लिये सुलभता सुनिश्चित करने हेतु उपयोगकर्त्ता-केंद्रित अभिकल्पना अत्यंत आवश्यक है।

- **प्रौद्योगिकी-केंद्रित दृष्टिकोण:**
  - ई-गवर्नेंस परियोजनाएँ **बैक-एंड इंटीग्रेशन** के माध्यम से प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित करने पर ध्यान केंद्रित करती हैं, जैसे कि **रिकॉर्डों को डिजिटल** बनाना और वर्कफ्लो को स्वचालित करना।
    - हालाँकि ये प्रगतियाँ **कार्यकुशलता** बढ़ाती हैं, लेकिन वे प्राय: **उपयोगकर्त्ता अनुभव** और **पहुँच** को नज़रअंदाज़ कर देती हैं।
  - **डिजिटल इंडिया** और **UPI** ऐसे उल्लेखनीय उदाहरण हैं जहाँ **तकनीकी अवसंरचना** ने लोक सेवा प्रदायगी को रूपांतरित किया है, हालाँकि प्राथमिक ध्यान **लेन-देन की**

दक्षता बढ़ाने पर रहा है, न कि यह सुनिश्चित करने पर कि सेवाएँ उपेक्षित वर्गों के लिये **आसानी से सुलभ** और उपयोगकर्त्ता के अनुकूल हों।

- **उपयोगकर्त्ता-केंद्रित डिज़ाइन का अभाव:**
  - विभिन्न **ई-गवर्नेंस प्लेटफॉर्म**, जैसे कि **उमंग ऐप** और **डिजीलॉकर**, व्यापक सेवाएँ प्रदान करने का लक्ष्य रखते हैं, जो प्राय: विविध उपयोगकर्त्ता की **आवश्यकताओं पर विचार करने** में विफल रहते हैं, मूलत: ग्रामीण क्षेत्रों में।
    - उदाहरण के लिये, **मोबाइल फोन स्वामित्व और डिजिटल साक्षरता में लैंगिक अंतर** प्राय: महिलाओं की डिजिटल सेवाओं के साथ पूरी तरह से जुड़ने की क्षमता को सीमित करता है, जैसा कि **NSS 2025 सर्वेक्षण** द्वारा उजागर किया गया है ।
  - **स्थानीय भाषा संबंधी बाधाओं**, क्षेत्रीय असमानताओं या आयु-संबंधी चुनौतियों पर विचार किये बगैर तैयार की गई सेवाएँ प्रभावी उपयोग में बाधा डालती हैं।
    - उदाहरण के लिये, **क्षेत्रीय भाषाओं के विकल्प या इंटरनेट पहुँच** की कमी अन्यथा लाभकारी सेवाओं के प्रति निरुत्साह या अपर्याप्त उपयोग का कारण बन सकती है।
- **समावेशिता से संबंधित चुनौतियाँ:**
  - प्रौद्योगिकी **बैक-एंड इंटीग्रेशन** पर ध्यान केंद्रित करने से **ग्रामीण आबादी, वरिष्ठ नागरिक और महिलाएँ** अनैच्छिक रूप से पृथक् हो सकती हैं, क्योंकि अपर्याप्त डिजिटल बुनियादी ढाँचे, कम डिजिटल साक्षरता और मोबाइल स्वामित्व की कमी जैसी समस्याएँ हैं।
  - 80वें दौर की राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण रिपोर्ट **मोबाइल स्वामित्व** में महत्त्वपूर्ण **लैंगिक अंतर** (महिलाओं में 63% बनाम पुरुषों में 83%) को इंगित करती है, जो **डिजिटल सेवाओं तक उनकी पहुँच** को प्रभावित करती है, उनकी स्वायत्तता और गोपनीयता को सीमित करती है।
    - परिणामस्वरूप महिलाएँ प्राय: परिवार के पुरुष सदस्यों पर निर्भर रहती हैं, जिससे डिजिटल शासन में पूर्ण रूप से भाग लेने की उनकी क्षमता बाधित होती है।
- **प्रभावी शासन के लिये उपयोगकर्त्ता-केंद्रित डिज़ाइन:**
  - ई-गवर्नेंस में **उपयोगकर्त्ता-केंद्रित दृष्टिकोण** समावेशी डिज़ाइन, **सरल इंटरफेस** और **बहुभाषी सहयोग** को प्राथमिकता देगा।
    - इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि **प्रत्येक नागरिक**, चाहे वह किसी भी लिंग, आयु या भौगोलिक क्षेत्र का हो, सरकारी सेवाओं तक प्रभावी ढंग से पहुँच और उनका उपयोग कर सकेगा।
  - **भारतनेट** और **डिजिटल इंडिया ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी के विस्तार** की दिशा में कार्य कर रहे हैं, जो ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल विभाजन को समाप्त करने के लिये महत्त्वपूर्ण है।
    - हालाँकि सार्थक डिजिटल भागीदारी के लिये डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों और विशिष्ट उपयोगकर्त्ता की आवश्यकताओं के अनुरूप स्थानीयकृत सामग्री पर भी ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष:

जहाँ लोक प्रशासन में सुधार के लिये **तकनीकी एकीकरण** आवश्यक है, वहीं ई-गवर्नेंस सेवाओं को सभी नागरिकों के लिये सुलभ, समावेशी और प्रभावी बनाने के लिये **उपयोगकर्त्ता-केंद्रित डिज़ाइन** भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है। इन दोनों पहलुओं में **संतुलन** बनाने से अधिक समतापूर्ण और **कुशल शासन** सुनिश्चित होगा, जो एक वास्तविक **समावेशी डिजिटल समाज** के निर्माण में योगदान देगा।

प्रश्न 8. नागरिक समाज संगठनों को गैर-राज्य अभिनेता की तुलना में प्राय: राज्य विरोधी अभिनेता माना जाता है। क्या आप सहमत हैं? औचित्य सिद्ध कीजिये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** नागरिक समाज संगठनों (CSO) को परिभाषित करते हुए समाज में उनकी भूमिका को स्पष्ट कीजिये, राज्य-विरोधी अभिनेताओं के रूप में उनकी धारणा को संबोधित कीजिये।
- **मुख्य भाग:** नीति-निर्माण में नागरिक समाज संगठनों की भूमिका, राज्य के साथ उनके अंतर्संबंध और उनसे संबंधित उदाहरण बताइये, जहाँ उन्हें राज्य-विरोधी माना जाता है।
- **निष्कर्ष:** तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: **नागरिक समाज संगठन (CSO)** गैर-सरकारी संस्थाएँ हैं, जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में लोक कल्याण, सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों की वकालत करने के लिये कार्य करती हैं। हालाँकि **नागरिक समाज संगठन लोकतांत्रिक**

शासन और **सार्वजनिक जवाबदेही** के लिये महत्त्वपूर्ण हैं, फिर भी उन्हें प्रायः राज्य-विरोधी माना जाता है, मूलतः जब उनकी वकालत **सरकारी नीतियों** को चुनौती देती है। हालाँकि यह धारणा समाज में नागरिक समाज संगठनों की भूमिका के पूर्ण दायरे का प्रतिनिधित्व नहीं करती है।

- **नागरिक समाज संगठनों को राज्य-विरोधी क्यों माना जाता है ?**
  - नागरिक समाज संगठन **शासन में खामियों, अधिकारों के उल्लंघन और नीतिगत विफलताओं** को उजागर करते हैं, जिन्हें सरकारें टकरावपूर्ण मान सकती हैं।
  - **भूमि अधिग्रहण कानूनों** और बड़े पैमाने पर औद्योगिक परियोजनाओं के खिलाफ विरोध को आर्थिक विकास में बाधा के रूप में चित्रित किया गया है।
  - **ग्रीनपीस** और **एमनेस्टी इंटरनेशनल** जैसे संगठनों पर FCRA 2020 के तहत प्रतिबंध संप्रभुता और सुरक्षा के आधार पर उचित ठहराया गया था।
  - **वर्ष 2017-23 के बीच 20,000 से अधिक NGO के FCRA लाइसेंस** रद्द किये गए, जिससे धन तक उनकी पहुँच सीमित हो गई और शत्रुता की धारणा को बल मिला।
  - **मानवाधिकारों, पर्यावरणीय स्थिरता या अल्पसंख्यक कल्याण** की वकालत को प्रायः "राष्ट्र-विरोधी" या विदेशी प्रभाव वाला करार दिया जाता है, जिससे अविश्वास गहराता है।
- **शासन में नागरिक समाज संगठनों की सहयोगात्मक भूमिका**
  - मतभेदों के बावजूद नागरिक समाज संगठन विकास और कल्याणकारी पहलों को मज़बूत करने के लिये प्रायः **राज्य के साथ साझेदारी** करते हैं।
  - **राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM)** के अंतर्गत, नागरिक समाज संगठन कौशल विकास और आय सृजन के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाते हैं।
  - सरकार के सहयोग से **SEWA** ने महिलाओं की आजीविका और वित्तीय समावेशन में सुधार किया है।
  - **प्रदान** (PRADAN) और **गूँज** (Goonj) जैसे संगठन सामुदायिक विकास, आपदा राहत और स्थानीय क्षमता निर्माण में सहायता करते हैं।
  - **कोविड-19** के दौरान नागरिक समाज संगठनों ने खाद्य सहायता, प्रवासी श्रमिकों को सहायता और टीकाकरण के प्रति जागरूकता प्रदान की, जिससे सरकारी क्षमता में वृद्धि हुई।
- **सेवा प्रदायगी और जवाबदेही का समर्थन**
  - स्थानीय नागरिक समाज संगठन **मनरेगा** और **पोषण अभियान** जैसी योजनाओं को **अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाने** में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा समावेशिता सुनिश्चित करते हैं।
  - **जन सूचना अधिकार के लिये राष्ट्रीय अभियान (NCPRI)** ने **RTI अधिनियम, 2005** को सफलतापूर्वक पारित कराया, जो जवाबदेही और पारदर्शिता को सुदृढ़ करने की दिशा में एक मील का पत्थर है।
  - ऐसी पहलें **सेवा प्रावधान** और **नीतिगत समर्थन** में नागरिक समाज संगठनों की दोहरी भूमिका प्रदर्शित करती हैं।
- **वैश्विक मान्यता और लोकतांत्रिक मूल्य**
  - UNDP और विश्व बैंक की रिपोर्टें **सतत् विकास लक्ष्य, सहभागी शासन और समावेशी विकास** को प्राप्त करने के लिये नागरिक समाज संगठनों को महत्त्वपूर्ण मानती हैं।
  - कमज़ोर समुदायों के सशक्तीकरण एवं संवाद को बढ़ावा देकर नागरिक समाज संगठन **लोकतांत्रिक वैधता** को सुदृढ़ करते हैं और सामाजिक विश्वास को सुदृढ़ करते हैं।
- **संतुलित दृष्टिकोण**
  - **नागरिक समाज संगठनों** को **राज्य-विरोधी** मानने की धारणा मुख्यतः उनके निगरानी कार्य से उत्पन्न होती है, जो राज्य की प्राधिकारिता के लिये चुनौती उत्पन्न करते हैं।
  - वास्तव में ये **रचनात्मक साझेदार** हैं, जो शासन को पूरक बनाते हैं, अधिकारों की रक्षा करते हैं और समान विकास सुनिश्चित करते हैं।

निष्कर्ष:

नागरिक समाज संगठन कभी-कभी **राज्य का विरोध** कर सकते हैं, लेकिन इससे वे **राज्य-विरोधी** नहीं हो जाते। वे अपरिहार्य गैर-राजकीय अभिकर्त्ता बने रहते हैं, जो **उत्तरदायी कर्त्तव्यों** को **सहयोगात्मक लोक सेवा प्रदायगी** के साथ जोड़ते हैं। भारत में समावेशी, सहभागी और अधिकार-आधारित शासन प्राप्त करने के लिये रचनात्मक राज्य-नागरिक समाज संगठन (CSO) सहभागिता आवश्यक है।

प्रश्न 9. भारत-अफ्रीका डिजिटल साझेदारी आपसी सम्मान, सह-विकास और दीर्घकालिक संस्थागत साझेदारी प्राप्त कर रही है। विस्तार से बताइये। (150 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** भारत-अफ्रीका डिजिटल साझेदारी का परिचय लिखिये तथा पारस्परिक सम्मान, सह-विकास और संस्थागत साझेदारी की ओर इसके बदलाव पर प्रकाश डालिये।
- **मुख्य भाग:** भारत और अफ्रीका के बीच डिजिटल सहयोग के विकास पर चर्चा कीजिये तथा पारस्परिक लाभ के विशिष्ट उदाहरण, अपनाई गई डिजिटल नीतियों और उनके समक्ष आई चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित कीजिये।
- **निष्कर्ष:** अफ्रीका में समावेशी विकास और डिजिटल परिवर्तन हेतु साझेदारी की दीर्घकालिक क्षमता पर प्रकाश डालते हुए उत्तर समाप्त कीजिये।

परिचय:

भारत-अफ्रीका डिजिटल साझेदारी समय के साथ विकसित हुई है, जिसने पारंपरिक विकासात्मक मॉडलों से आगे बढ़ते हुए **पारस्परिक सम्मान, सह-विकास** तथा **दीर्घकालिक संस्थागत सहयोग** को मज़बूती दी है। जैसे-जैसे अफ्रीका अपनी **डिजिटल परिवर्तन यात्रा** की ओर अग्रसर हो रहा है, भारत का डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर (DPI), जैसे– **आधार और UPI** पर केंद्रित होना सह-निर्माण के लिये महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है, जो अफ्रीका के राष्ट्रीय और महाद्वीपीय लक्ष्यों के अनुरूप है।

मुख्य भाग:

- **डिजिटल समाधान में पारस्परिक सम्मान और सह-विकास:**
  - भारत की अफ्रीका के साथ सहभागिता **सह-विकास** पर बल देती है, जिसमें **भारतीय डिजिटल समाधानों** को स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला गया है।
    - इसका उदाहरण है **मॉड्यूलर ओपन-सोर्स आइडेंटिफिकेशन प्लेटफॉर्म**, जिसे टोगो में लागू किया गया। यह भारत की इस प्रतिबद्धता को दर्शाता है कि वह राष्ट्रीय डिजिटल एजेंडे को समर्थन देने के लिये **किफायती, विस्तार योग्य** तथा **ओपन-सोर्स समाधान** प्रदान करने के लिये तत्पर है।
  - वर्ष 2023 में **ज़ांबिया** ने भारत के **IIIT-B** के साथ साझेदारी की ताकि अपने स्मार्ट ज़ांबिया इनिशिएटिव को सशक्त कर सके, जिसमें **भारत के डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर मॉडल्स** को एकीकृत किया गया।
    - यह सहयोग इस बात को स्पष्ट करता है कि **समावेशी डिजिटल प्रणालियों** के निर्माण में **भारत का अनुभव** अफ्रीकी देशों को **सामाजिक-आर्थिक प्रगति** हासिल करने में सहायता कर सकता है।
- **संस्थागत साझेदारी और डिजिटल कूटनीति:**
  - **नामीबिया बैंक** का **भारत के NPCI** के साथ **सहयोग**, जिससे UPI जैसे भुगतान तंत्र का विकास हो रहा है, जो भारत और अफ्रीका के बीच उभरती **दीर्घकालिक संस्थागत साझेदारी** का प्रमाण है।
    - इसी प्रकार, **फास्ट ट्रांजेक्शन** के लिये **घाना** द्वारा **UPI** को एकीकृत करना, संपूर्ण अफ्रीका में वित्तीय समावेशन के एक मॉडल के रूप में **भारत के डिजिटल पारिस्थितिक तंत्र** में बढ़ते विश्वास को दर्शाता है।
  - ये उदाहरण इस बात को रेखांकित करते हैं कि **डिजिटल भागीदार** के रूप में **भारत की भूमिका** अन्य देशों से भिन्न है, क्योंकि भारत **सार्वजनिक हित-आधारित मॉडलों** पर बल देता है जो **अनुकूलनीय, किफायती** तथा **समावेशी** हैं।
- **डिजिटल अवसंरचना की चुनौतियाँ:**
  - प्रगति के बावजूद अफ्रीका अब भी कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, जैसे– **डिजिटल विभाजन, उच्च डाटा लागत** तथा **ऊर्जा की सीमाएँ**।
    - उदाहरण के लिये, **डिजिटल पहुँच** में **लैंगिक असमानता** अब भी एक बड़ी बाधा बनी हुई है, जिसमें प्राय: **महिलाएँ** डिजिटल अर्थव्यवस्था से पृथक् रह जाती हैं।
    - भारत की **डिजिटल साक्षरता** तथा **क्षमता-निर्माण** में विशेषज्ञता इस अंतर को पाटने में सहायक हो सकती है, किंतु **सतत् ऊर्जा** का उपलब्ध होना व्यापक स्तर पर **डिजिटल वृद्धि** के लिये अनिवार्य है।
- **भारत-अफ्रीका डिजिटल कॉम्पैक्ट की भावी संभावनाएँ:**
  - **भारत-अफ्रीका डिजिटल कॉम्पैक्ट** का उद्देश्य डिजिटल प्रशासन को आगे बढ़ाना है, जिससे संपूर्ण महाद्वीप में **समावेशी सार्वजनिक प्लेटफॉर्म** तैयार किये जा सकें।
  - भारत की **सह-विकास** के प्रति निरंतर प्रतिबद्धता, जैसे– **ज़ांज़ीबार में IIT मद्रास परिसर**, जहाँ **डेटा साइंस** और **एआई** जैसे कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं, अफ्रीका में तकनीकी क्षमता-निर्माण को व्यापक सामाजिक-आर्थिक लक्ष्यों के साथ जोड़ती है।

निष्कर्ष:

भारत-अफ्रीका **डिजिटल साझेदारी पारस्परिक सम्मान, सह-विकास** तथा **दीर्घकालिक सहयोग** के एक मॉडल का प्रतिनिधित्व करती है। **समावेशी अवसंरचना, प्रौद्योगिकी अंतरण** तथा **क्षमता-निर्माण** पर केंद्रित पहलों के माध्यम से दोनों क्षेत्र वर्तमान चुनौतियों को पार कर एक ऐसा **डिजिटल भविष्य** निर्मित करने की ओर अग्रसर हैं जो न्यायसंगत, सतत् तथा रूपांतरणकारी होगा।

प्रश्न 10. "वैश्वीकरण के क्षीण होने के साथ शीतयुद्ध के बाद की दुनिया संप्रभु राष्ट्रवाद का स्थल बनती जा रही है।" स्पष्ट कीजिये। (150 शब्द) 10

हल करने का दृष्टिकोण:

- परिचय में वैश्वीकरण का संदर्भ और संप्रभु राष्ट्रवाद के उदय पर संक्षेप में चर्चा कीजिये।
- उदाहरणों और आँकड़ों के आधार पर वैश्वीकरण के पतन और संप्रभु राष्ट्रवाद पर बढ़ते प्रभाव की जाँच कीजिये।
- तदनुसार निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: **शीतयुद्ध** की समाप्ति के बाद से विश्व ने **वैश्वीकरण के उदय** को देखा, जिसने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, आर्थिक एकीकरण तथा परस्पर संपर्क को प्रोत्साहित किया। हालाँकि वर्ष 1990 के बाद की अवधि में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिला है, जहाँ **सार्वभौम राष्ट्रवाद** वैश्विक भू-राजनीति की एक प्रमुख विशेषता के रूप में **उभरकर** सामने आया है, विशेषकर बढ़ते **संरक्षणवाद** और **भू-राजनीतिक तनावों** के संदर्भ में। यह प्रवृत्ति **उदारीकृत बाज़ारों और वैश्विक सहयोग के सिद्धांतों** को चुनौती देती है और यह संकेत देती है कि वैश्वीकरण का प्रभाव धीरे-धीरे क्षीण हो रहा है।

- **वैश्वीकरण का ह्रास:**
  - पिछले कुछ दशकों में वैश्वीकरण ने **परस्पर आर्थिक निर्भरता** और **वैश्विक व्यापार में** वृद्धि की है।
    - उदाहरण के लिये वैश्विक व्यापार ने **विश्व स्तर पर** आय में लगभग **24%** की वृद्धि की है तथा जनसंख्या के अति निर्धन **40%** हिस्से की आय में लगभग **50%** की वृद्धि हुई है, जिससे **1 अरब से अधिक लोग** गरीबी से बाहर निकले हैं।
  - किंतु बढ़ते **संरक्षणवादी उपायों** और **व्यापार युद्धों** ने इस प्रवृत्ति को कमज़ोर करना प्रारंभ कर दिया है।
    - उदाहरणस्वरूप, **अमेरिका-चीन व्यापार युद्ध** ने **वैश्विक मूल्य शृंखलाओं** को बाधित किया और परस्पर समन्वित अर्थव्यवस्थाओं की कमज़ोरियों को उजागर किया, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्र अधिक **आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्थाओं** की ओर बढ़ने लगे।
- **सार्वभौम राष्ट्रवाद का उदय:**
  - **राष्ट्रवादी सरकारों** ने, विशेषकर **अमेरिका और यूरोप** में, ऐसे **संरक्षणवादी नीतिगत कदम** अपनाए हैं जो वैश्विक सहयोग के बजाय राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता देते हैं।
    - यह **ब्रेक्ज़िट, अमेरिका फर्स्ट** और **इन्फ्लेशन रिडक्शन एक्ट (2022)** जैसी नीतियों में स्पष्ट दिखता है, जिनका उद्देश्य उद्योगों को पुनः देश में स्थापित करना तथा घरेलू रोज़गारों की रक्षा करना है।
  - कई देश **रणनीतिक स्वायत्तता** पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं और वैश्विक निर्भरताओं को एक कमज़ोरी के रूप में देख रहे हैं।
    - **भारत का आत्मनिर्भर भारत कार्यक्रम**, जो **इलेक्ट्रॉनिकी** और **औषधि** जैसे क्षेत्रों में **आत्मनिर्भरता** को बढ़ावा देता है, इसी परिवर्तन का प्रतिबिंब है।
    - यद्यपि इन नीतियों का उद्देश्य **आर्थिक लचीलापन** विकसित करना है, किंतु आलोचकों के अनुसार इन्हें **आर्थिक राष्ट्रवाद** का रूप माना जाता है, न कि सहयोग का।
- **वैश्विक व्यापार की चुनौतियाँ:**
  - वैश्विक व्यापार के लचीलापन के बावजूद **भू-राजनीतिक तनाव** और **आपूर्ति शृंखला में व्यवधान**, जिसे **कोविड-19 महामारी** ने और बढ़ा दिया, वैश्विक परस्पर निर्भरता के जोखिमों को उजागर करते हैं।
    - वर्तमान में देशों के समक्ष यह चुनौती है कि वे **राष्ट्रीय सुरक्षा चिंताओं और आर्थिक वृद्धि** को वैश्विक व्यापार से मिलने वाले लाभों के साथ संतुलित कर सकें।
  - **चीन का उदय और वैश्विक आपूर्ति शृंखलाओं में उसकी भूमिका** इस विरोधाभास का उदाहरण है कि एक ओर तो अर्थव्यवस्था वैश्वीकरण की ओर बढ़ रही है, वहीं दूसरी ओर राष्ट्र **प्रौद्योगिकी एवं विनिर्माण** जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता का प्रयास कर रहे हैं।

निष्कर्ष:

शीत युद्धोत्तर विश्व ने **वैश्विक सहयोग** से **सार्वभौम राष्ट्रवाद** के युग की ओर एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन देखा है, जहाँ **संरक्षणवाद** विश्व स्तर पर बढ़ रहा है। यद्यपि **वैश्वीकरण** ने प्रारंभ में आर्थिक वृद्धि और परस्पर निर्भरता को प्रोत्साहित किया, किंतु हाल के घटनाक्रम यह संकेत देते हैं कि राष्ट्र आत्मनिर्भरता और आर्थिक राष्ट्रवाद की ओर बढ़ रहे हैं। यह परिवर्तन आज राष्ट्रों के समक्ष आने वाली

चुनौतियों और जटिलताओं को दर्शाता है, जो तेज़ी से खंडित होते विश्व में **राष्ट्रीय हितों** और **वैश्विक सहयोग** की आवश्यकता के बीच संतुलन स्थापित करता है।

प्रश्न 11. "संवैधानिक नैतिकता एक आलम्ब है जो कि उच्च पदाधिकारियों और नागरिकों पर समान रूप से आवश्यक नियंत्रण का कार्य करता है...।"

सर्वोच्च न्यायालय के उपयुक्त प्रेक्षण के संदर्भ में, संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा तथा भारत में न्यायपालिका की स्वतंत्रता एवं न्यायिक उत्तरदायित्व के मध्य संतुलन सुनिश्चित करने में इसकी प्रयोज्यता की व्याख्या कीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** संवैधानिक नैतिकता पर सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणी से आरंभ कीजिये।
- **मुख्य भाग:** संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा की व्याख्या कीजिये।
    - भारत में न्यायिक स्वतंत्रता और न्यायिक जवाबदेहिता के बीच संतुलन सुनिश्चित करने के लिये इसके अनुप्रयोग पर चर्चा कीजिये।
- **निष्कर्ष:** उपयुक्त टिप्पणी के साथ समापन कीजिये।

उत्तर: *दिल्ली सरकार बनाम भारत संघ (2018)* मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इस बात पर ज़ोर दिया कि **संवैधानिक नैतिकता** वह मार्गदर्शक सिद्धांत है जो यह सुनिश्चित करता है कि शासन और आचरण संविधान के मूल्यों के प्रति निष्ठावान रहें। यह व्यक्तिगत, राजनीतिक या संस्थागत हितों से ऊपर संवैधानिक सिद्धांतों के पालन की मांग करता है।

संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा

- संवैधानिक नैतिकता (Constitutional Morality - CM) एक ऐसी अवधारणा है जो संविधान में निहित उन सिद्धांतों और मूल्यों को संदर्भित करती है जो सरकार तथा नागरिकों दोनों के आचरण का मार्गदर्शन करते हैं।
- संवैधानिक नैतिकता की अवधारणा का प्रतिपादन 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश क्लासिसिस्ट **जॉर्ज ग्रोट** (George Grote) द्वारा किया गया था।
    - उन्होंने संवैधानिक नैतिकता को देश के **"संविधान के स्वरूपों के प्रति सर्वोच्च श्रद्धा"** के रूप में वर्णित किया।
- भारत में इस पद का प्रयोग सर्वप्रथम **डॉ. भीमराव अंबेडकर** द्वारा किया गया था।
- यह सार्वजनिक जीवन, जिसमें न्यायपालिका भी सम्मिलित है, में **संयम, निष्पक्षता, पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व** की अपेक्षा करता है।
- यह संविधान को व्यक्तिगत इच्छा से ऊपर उठाता है और इस प्रकार **नैतिक मार्गदर्शक** के रूप में कार्य करता है।

न्यायिक स्वतंत्रता एवं जवाबदेहिता के लिये अनुप्रयोज्यता

- **न्यायिक स्वतंत्रता:** न्यायपालिका को राजनीतिक हस्तक्षेप से सुरक्षित रखा जाना चाहिये ताकि **अनुच्छेद 50** (न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्करण) तथा **अनुच्छेद 124-147** (सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय की स्वतंत्रता) को सशक्त रूप से बनाए रखा जा सके।
    - संवैधानिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि न्यायाधीश बिना भय या पक्षपात के निर्णय दे सकें, जैसा कि **केशवानंद भारती (1973)** और **NJAC (2015)** मामलों में देखा गया, जहाँ स्वतंत्रता को मूल संरचना का अंग मानकर संरक्षित किया गया।
- **न्यायिक जवाबदेहिता:** संवैधानिक नैतिकता **अनुच्छेद 124(4) और 217** के तहत महाभियोग, आंतरिक प्रक्रियाओं एवं कॉलेजियम नियुक्तियों में पारदर्शिता *(दूसरा न्यायाधीश मामला, 1993)* जैसे तंत्रों के माध्यम से जवाबदेहिता की मांग करती है।
    - उदाहरण के लिये, **CJI** कार्यालय को **RTI** (2019) के तहत लाया जाना स्वतंत्रता और जवाबदेहिता के बीच संतुलन को दर्शाता है।
- **न्यायिक नैतिकता:** न्यायिक मूल्यों के पुनर्व्याख्यान (1997) से सुनिश्चित होता है कि न्यायाधीश **निष्पक्षता** और **सत्यनिष्ठा** का पालन करते हुए **संवैधानिक नैतिकता** को मज़बूत करें।
- **नियंत्रण एवं संतुलन:** यह सिद्धांत न्यायिक अतिक्रमण (जैसे– जनहित याचिका का दुरुपयोग) पर रोक लगाता है, साथ ही न्यायिक उत्तरदायित्व सुनिश्चित करता है, जिसे **महाभियोग प्रावधान (अनुच्छेद 124(4)), आंतरिक तंत्र (in-house mechanisms)** और पारदर्शी कार्यप्रणाली की बढ़ती मांगों के माध्यम से लागू किया जाता है।

निष्कर्ष:

संवैधानिक नैतिकता यह सुनिश्चित करती है कि **न्यायिक स्वतंत्रता न्यायिक सर्वोच्चता में न बदल जाए और जवाबदेही स्वायत्तता को क्षीण न कर दे**। जैसा कि **पूर्व मुख्य न्यायाधीश डी.वाई. चंद्रचूड़** ने कहा था, ***"सच्ची न्यायिक स्वतंत्रता गलत आचरण की रक्षा के लिये ढाल नहीं है, बल्कि यह संवैधानिक मूल्यों की पूर्ति सुनिश्चित करने का एक साधन है।"***

प्रश्न 12. भारतीय संविधान ने कुछ प्रक्रियात्मक अवरोधों के साथ सामान्य विधायी संस्थाओं को संविधान संशोधन की शक्ति प्रदान की है। इस कथन को दृष्टिगत कर संसद के संविधान संशोधन की शक्ति पर प्रक्रियात्मक एवं सारभूत परिसीमाओं का परीक्षण कीजिये। (250 शब्द)

> **हल करने का दृष्टिकोण:**
> - **परिचय:** संविधान के अनुच्छेद 368 के तहत संशोधन शक्ति की संक्षेप में व्याख्या करते हुए आरंभ कीजिये।
> - **मुख्य भाग:** संसद की संविधान संशोधन शक्ति पर प्रक्रियात्मक एवं सारभूत परिसीमाओं पर चर्चा कीजिये।
>   - संविधान में संशोधन और निरंतरता के बीच संतुलन की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये।
> - **निष्कर्ष:** उपयुक्त टिप्पणी के साथ समापन कीजिये।

उत्तर: भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 368** के अंतर्गत संसद को संविधान में संशोधन करने का अधिकार प्राप्त है। हालाँकि, यह शक्ति न तो पूर्णत: निरंकुश है और न ही असीमित। **प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय** तथा **मूल संरचना सिद्धांत** संविधान के लचीलेपन और उसकी निरंतरता के बीच संतुलन सुनिश्चित करते हैं।

प्रक्रियात्मक परिसीमाएँ

- **विशेष बहुमत की आवश्यकता:** संशोधन विधेयकों को संसद के दोनों सदनों में कुल सदस्यों के बहुमत तथा उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से पारित किया जाना चाहिये।
- **राज्यों द्वारा अनुमोदन [अनुच्छेद 368(2)]:** कुछ संशोधनों के लिये कम-से-कम आधे राज्य विधानमंडलों द्वारा अनुमोदन आवश्यक है (जैसे–संघीय प्रावधान, संसद में प्रतिनिधित्व, राष्ट्रपति की शक्तियाँ)।
- **संयुक्त बैठक नहीं:** गतिरोध की स्थिति में संयुक्त बैठक की अनुमति नहीं है, जबकि सामान्य विधेयकों के मामले में यह संभव है।
- **राष्ट्रपति की अनिवार्य स्वीकृति:** संशोधन विधेयक राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया जाता है और वे स्वीकृति रोक नहीं सकते।

सारभूत परिसीमाएँ

- **मूल संरचना सिद्धांत:** यह सिद्धांत ***केशवानंद भारती मामले (1973)*** में विकसित हुआ, जिसके अनुसार संसद संविधान की मूल विशेषताओं, जैसे–**विधि का शासन, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, पंथनिरपेक्षता, संघवाद और लोकतंत्र** को परिवर्तित नहीं कर सकती।
- **न्यायिक पुनरावलोकन:** *मिनर्वा मिल्स मामले (1980)* में न्यायालय ने उन प्रावधानों को असंवैधानिक ठहराया जिनसे संसद को असीमित संशोधन शक्ति मिलती थी। न्यायालय ने दोहराया कि **सीमित सरकार** संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है।

- **मूल अधिकार तथा राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों के बीच संतुलन:** संविधान संशोधन इस प्रकार नहीं किया जा सकता जिससे भाग III (मूल अधिकार) तथा भाग IV (राज्य के नीति निदेशक तत्त्व) के बीच का **संतुलन एवं सामंजस्य** नष्ट हो जाए।
- **संघवाद की सुरक्षा:** ऐसे संशोधन जिनसे **केंद्र और राज्यों के बीच शक्ति-संतुलन** प्रभावित होता है, उनके लिये राज्यों की सहमति आवश्यक है। केंद्र द्वारा **एकतरफा हस्तक्षेप** पर प्रतिबंध है।

संवैधानिक संशोधनों एवं निरंतरता के बीच संतुलन

- **परिवर्तन के कारक के रूप में संशोधन:** अनुच्छेद 368 संसद को संविधान को बदलती सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने की अनुमति देता है।
    - मुख्य उदाहरणों में **73वाँ** और **74वाँ** संशोधन (स्थानीय शासन), **86वाँ** संशोधन (शिक्षा का अधिकार) और **101वाँ** संशोधन (GST) शामिल हैं, लोकतांत्रिक गहनता और आर्थिक आधुनिकीकरण को गति प्रदान की गई है।
- **मूल सिद्धांतों की निरंतरता:** प्रक्रियात्मक एवं सारभूत परिसीमाएँ मूल मूल्यों– लोकतंत्र, पंथनिरपेक्षता, समानता, संघवाद, न्यायिक समीक्षा आदि की रक्षा करती हैं।
- **मिनर्वा मिल्स (1980)** तथा **एस.आर. बोम्मई (1994) मामले** में न्यायिक हस्तक्षेप ने इन सीमाओं को मज़बूत किया, सुधारों की अनुमति देते हुए सत्तावादी या बहुसंख्यकवादी दुरुपयोग को रोका।

निष्कर्ष:

इस प्रकार, यद्यपि संविधान संसद को प्रावधानों में संशोधन करने की व्यापक शक्तियाँ प्रदान करता है, प्रक्रिया संबंधी सुरक्षा प्रावधान **लोकतांत्रिक सहभागिता** सुनिश्चित करते हैं तथा सारभूत परिसीमाएँ इसकी **मूल पहचान** की रक्षा करती हैं। जैसा कि **एच.एम. सीरवै** (प्रख्यात भारतीय न्यायविद् और संवैधानिक विशेषज्ञ) ने कहा है— **"संविधान लचीलेपन और स्थायित्व के बीच संतुलन स्थापित करता है, जिससे विकास संभव होता है परंतु उसके मूल सिद्धांत संकट में नहीं पड़ते।"** इस कथन का तात्पर्य है कि संशोधन प्रगति को संभव बनाते हैं, किंतु संविधान के **आधारभूत मूल्यों** को अक्षुण्ण रखते हैं।

प्रश्न 13. भारत में कॉलेजियम प्रणाली के विकास की विवेचना कीजिए। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रणाली के फायदे और नुकसान का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** भारत में कॉलेजियम प्रणाली का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
- **मुख्य भाग:** भारत में कॉलेजियम प्रणाली के विकास पर चर्चा कीजिये।
    - भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रणाली के लाभ और हानियों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिये।
- **निष्कर्ष:** आगे की राह स्पष्ट करते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: न्यायिक स्वतंत्रता लोकतंत्र की आधारशिला है और पारदर्शी नियुक्तियाँ उसे बनाए रखने के लिये अत्यावश्यक हैं। भारत में सर्वोच्च न्यायालय (SC) और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं स्थानांतरण **कॉलेजियम प्रणाली** के अंतर्गत होते हैं।

कॉलेजियम प्रणाली का विकास:

- **संवैधानिक प्रावधान: अनुच्छेद** 124(2) राष्ट्रपति को भारत के **मुख्य न्यायाधीश (CJI)** के परामर्श से सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार देता है।
- **एस.पी. गुप्ता बनाम भारत संघ (1981):** परामर्श की व्याख्या संकीर्ण रूप में की गई, जिससे कार्यपालिका को महत्त्वपूर्ण नियंत्रण प्राप्त हुआ।
- **पहला न्यायाधीश मामला (1982):** कार्यपालिका की प्राथमिकता को मान्यता दी गई।
- **दूसरा न्यायाधीश मामला (1993):** CJI की प्राथमिकता को मान्यता दी; नियुक्तियों की सिफारिश **CJI के साथ-साथ चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों का कॉलेजियम (Collegium)** करता है।
- **तीसरा न्यायाधीश मामला (1998):** स्थानांतरण और पदोन्नति के लिये कॉलेजियम की संरचना, प्रक्रिया और परामर्श की स्पष्ट व्याख्या की।
- **राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (NJAC, 2014):** 99वें संशोधन के माध्यम से कॉलेजियम की जगह प्रस्तावित; इसमें **CJI, दो वरिष्ठ SC न्यायाधीश, कानून मंत्री और दो प्रतिष्ठित व्यक्ति** शामिल थे।
    - न्यायिक स्वतंत्रता और मूलभूत ढाँचे का उल्लंघन करने के कारण वर्ष 2015 में इसे रद्द कर दिया गया।
- **प्रक्रिया ज्ञापन (MoP):** सरकार और न्यायपालिका द्वारा नियुक्तियों के लिये रूपरेखा; पारदर्शिता बढ़ाने के लिये वर्ष 2015 में संशोधित, लेकिन अभी भी अंतिम रूप दिया जाना शेष है।

लाभ:

- राजनीतिक हस्तक्षेप को न्यूनतम करके **न्यायिक स्वतंत्रता की रक्षा** करता है।
- सहकर्मी मूल्यांकन योग्यता, सत्यनिष्ठा और अनुभव के आधार पर चयन सुनिश्चित करता है।
- लोकतांत्रिक आदर्शों को बनाए रखने के लिये प्रतिबद्ध न्यायाधीशों को बढ़ावा देकर संविधान के मूल्यों की रक्षा करता है।

हानि:

- पारदर्शिता और जवाबदेहिता का अभाव; **निर्णयों की सार्वजनिक रूप से व्याख्या नहीं** की जाती।
- यह **अभिजातवाद** और संभावित मनमानी को जन्म दे सकता है।
- यह **न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच तनाव** उत्पन्न करता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ तुलना:

- अमेरिका में राष्ट्रपति न्यायाधीशों का नामांकन करता है, जिसे सीनेट द्वारा अनुमोदित किया जाता है।
- **लाभ:** अधिक लोकतांत्रिक निगरानी और पारदर्शिता।
- **हानि:** राजनीतिक प्रभाव और दलगत पक्षपात का खतरा, जो योग्यता-आधारित नियुक्तियों को कमज़ोर कर सकता है।

आगे की राह

- **कॉलेजियम प्रक्रियाओं को संहिताबद्ध करना:** चयन, पात्रता, समय-सीमा, साक्षात्कार और भाई-भतीजावाद विरोधी उपायों के लिये औपचारिक दिशानिर्देश।
- **सलाहकार एवं खोज समितियाँ:** प्रख्यात न्यायविदों, शिक्षाविदों और बार प्रतिनिधियों को शामिल करना।
- **पारदर्शिता एवं सूचना का अधिकार:** कॉलेजियम के निर्णयों को प्रकाशित करना; सार्वजनिक पहुँच की अनुमति प्रदान करना।
- **विविधता एवं योग्यता:** महिलाओं, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व और प्रदर्शन-आधारित चयन सुनिश्चित करना।
- **दक्षता एवं प्रौद्योगिकी:** समय-सीमा लागू करना, एक समान सेवानिवृत्ति, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI)-सहायता प्राप्त उम्मीदवार मूल्यांकन और न्यायालय प्रबंधन सुधार।

निष्कर्ष:

जैसा कि **ग्रैनविल ऑस्टिन** ने कहा– भारतीय संविधान एक **"मूल्यों का अभिन्न जाल"** है, जहाँ **स्वतंत्रता** और **जवाबदेहिता** का सह-अस्तित्व होना आवश्यक है। **कॉलेजियम प्रणाली** न्यायिक **स्वायत्तता** की सुरक्षा करती है, किंतु ऐसी सुधारात्मक पहल आवश्यक है जो **पारदर्शिता, वस्तुनिष्ठ मानदंड** एवं **जवाबदेहिता** में वृद्धि तथा **स्वतंत्रता को प्रभावित किये बिना न्यायिक वैधता** को मज़बूत करें, राष्ट्र के लिये एक **मज़बूत एवं विश्वसनीय न्यायपालिका** का निर्माण कर सकती है।

प्रश्न 14. भारत में नियोजित विकास के संदर्भ में केंद्र राज्य वित्तीय संबंधों के विकसित हो रहे स्वरूप (पैटर्न) का परीक्षण कीजिये। हाल के सुधारों ने भारत में राजकोषीय संघवाद को कितना प्रभावित किया है? (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** भारत में केंद्र-राज्य वित्तीय संबंधों का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
- **मुख्य भाग:** भारत में नियोजित विकास के संदर्भ में केंद्र-राज्य वित्तीय संबंधों के उभरते स्वरूप पर चर्चा कीजिये।
  - भारत में राजकोषीय संघवाद पर हाल के सुधारों के प्रभाव पर प्रकाश डालिये।
- **निष्कर्ष:** आगे की राह स्पष्ट करते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: राजकोषीय संघवाद से आशय केंद्र और राज्यों के बीच वित्तीय शक्तियों एवं दायित्वों के विभाजन से है, जो भारत में नियोजित आर्थिक विकास के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। भारत एक **अर्द्ध-संघीय (quasi-federal) मॉडल** का पालन करता है, जिसमें एक सशक्त केंद्रीय प्राधिकरण के साथ-साथ राज्यों को **अनुच्छेद 268-293** के अंतर्गत स्वायत्त राजकोषीय शक्तियाँ प्रदान की गई हैं।

केंद्र-राज्य वित्तीय संबंधों का ऐतिहासिक स्वरूप

- **पूर्व-नियोजन काल:** केंद्र के पास प्रमुख करों का नियंत्रण था, जिससे **ऊर्ध्वाधर असंतुलन (vertical imbalance)** उत्पन्न हुआ, जबकि राज्यों को अपने व्यय की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये अनुदानों पर अत्यधिक निर्भर रहना पड़ता था।
- **पंच वर्षीय नियोजन काल (1950-80 के दशक):** संसाधनों का आवंटन **योजना आयोग** द्वारा केंद्रीय रूप से किया जाता था, जहाँ राष्ट्रीय प्राथमिकताओं पर विशेष बल दिया जाता था।
  - **वित्त आयोग** ने कर वितरण और अनुदानों (grants-in-aid) की अनुशंसा की।
  - अनुदान क्षैतिज असंतुलन को घटाने में महत्त्वपूर्ण रहे, जिससे निर्धन राज्यों को विकास हेतु पर्याप्त संसाधन प्राप्त हो सके।
- **मुख्य विशेषताएँ:**
  - **ऊर्ध्वाधर असंतुलन:** राज्यों के पास स्वतंत्र राजस्व स्रोत सीमित थे।

- **क्षैतिज असंतुलन:** जिन राज्यों का राजकोषीय आधार कमज़ोर था, वे केंद्र से प्राप्त अंतरणों पर अधिक निर्भर रहते थे।

हालिया सुधार एवं राजकोषीय संघवाद पर उनका प्रभाव

- **सहकारी संघवाद को संस्थागत बनाना:**
  - **नीति आयोग की भूमिका:** योजना आयोग का स्थान लेकर **सहकारी तथा प्रतिस्पर्द्धी संघवाद** को बढ़ावा देने हेतु स्थापित, राज्यों को संसाधन आवंटन पर परामर्श देता है।
  - **GST (2017):** अप्रत्यक्ष करों का एकीकरण किया गया, राज्यों को राजस्व हानि पर क्षतिपूर्ति दी गई; GST परिषद ने सहकारी संघवाद को संस्थागत रूप दिया।
- **समान संसाधन वितरण:**
  - **ऊर्ध्वाधर हस्तांतरण:** 15वें वित्त आयोग ने अनुशंसा की कि विभाज्य कर-कोष (divisible pool) का 41% राज्यों को हस्तांतरित किया जाए।
  - **क्षैतिज हस्तांतरण:** जनसंख्या, आय-अंतर, वन क्षेत्र और जनसांख्यिकीय प्रदर्शन जैसे मानदंडों के आधार पर।
  - **सहायता-अनुदान (Grants-in-aid):** क्षेत्रीय असमानताओं को दूर करने तथा पिछड़े क्षेत्रों में सामाजिक क्षेत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये।
- **आर्थिक दक्षता:**
  - **प्रदर्शन-आधारित अंतरण:** वित्तीय अनुशासन और प्रशासनिक सुधारों को प्रोत्साहित करना।
  - **GST व्यवस्था:** एकीकृत बाज़ार और कारोबार सुगमता को बढ़ावा देना, आर्थिक विकृतियों को कम करना।
  - **FRBM अधिनियम:** विवेकपूर्ण वित्तीय प्रबंधन एवं उत्तरदायित्वपूर्ण उधारी को प्रोत्साहित करना।

राजकोषीय संघवाद के लिये चुनौतियाँ

- **ऊर्ध्वाधर राजकोषीय असंतुलन:** संघ सरकार अधिकांश राजस्व स्रोतों पर नियंत्रण रखती है, जबकि स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे प्रमुख व्यय का दायित्व राज्यों पर होता है।
- **केंद्र प्रायोजित योजनाएँ:** इन योजनाओं की प्रायः आलोचना होती है क्योंकि ये राज्यों की राजकोषीय स्वायत्तता को सीमित करती हैं।
- **GST क्षतिपूर्ति में विलंब:** इससे सहकारी संघवाद में राज्यों का विश्वास कमज़ोर हुआ है।
- **उधारी पर प्रतिबंध: अनुच्छेद 293(3)** के अंतर्गत राज्यों को उधार लेने के लिये संघ की सहमति आवश्यक होती है, जिससे उनका वित्तीय लचीलापन सीमित हो जाता है।

निष्कर्ष:

संतुलित **राजकोषीय संघवाद** समानता, दक्षता और स्वायत्तता के लिये अनिवार्य है। सुधारों का ध्यान समय पर **कर-वितरण**, राज्यों की **राजस्व-संग्रहण क्षमता** को प्रोत्साहन, **प्रदर्शन-आधारित अनुदान**, कमज़ोर राज्यों को लक्षित सहयोग तथा सुदृढ़ **सहकारी तंत्र** पर होना चाहिये। राज्यों की क्षमताओं और राजकोषीय प्रक्रियाओं को **नीति आयोग** के मार्गदर्शन से सशक्त करना ही संपूर्ण भारत में **सतत् और समावेशी विकास** सुनिश्चित करेगा।

प्रश्न 15. पर्यावरण दबाव समूह क्या हैं? भारत में जागरूकता बढ़ाने, नीतियों को प्रभावित करने और पर्यावरण संरक्षण की वकालत करने में उनकी भूमिका का विवेचन कीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- पर्यावरणीय दबाव समूहों को परिभाषित कीजिये।
- भारत में जागरूकता बढ़ाने, नीतियों को प्रभावित करने और पर्यावरण संरक्षण की वकालत करने में उनकी भूमिका पर चर्चा कीजिये।
- इन समूहों के सामने आने वाली कुछ चुनौतियों या मुद्दों पर प्रकाश डालिये।
- आगे की राह को स्पष्ट करते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: पर्यावरणीय दबाव समूह ऐसे संगठन, गैर-सरकारी संगठन या नागरिक समूह होते हैं जो **पर्यावरण संरक्षण और सतत् विकास को बढ़ावा देने** के लिये जनमत, शासन और नीतियों को प्रभावित करते हैं। भारत के तीव्र औद्योगीकरण एवं शहरीकरण ने उनकी प्रासंगिकता को और बढ़ा दिया है।

जागरूकता बढ़ाने में भूमिका:

- **नागरिक शिक्षा:** प्रदूषण, वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन के संबंध में अभियान, कार्यशालाएँ और सेमिनार आयोजित करना।

- **ज़मीनी स्तर पर लामबंदी:**
    - **चिपको आंदोलन (वर्ष 1973):** ग्रामीणों, विशेषकर महिलाओं ने, वनों को व्यावसायिक कटाई से बचाया।
    - **नर्मदा बचाओ आंदोलन:** बांध परियोजनाओं के पारिस्थितिकीय और सामाजिक प्रभावों पर प्रकाश डाला गया।
- **मीडिया एवं सामाजिक मंच:** ग्रीनपीस इंडिया और सीएसई जैसे आधुनिक गैर-सरकारी संगठन (NGO) मीडिया का उपयोग अपशिष्ट पृथक्करण, जल संरक्षण तथा वृक्षारोपण जैसी सतत् प्रथाओं को बढ़ावा देने के लिये करते हैं।

नीतियों को प्रभावित करने में भूमिका:

- **समर्थन सुनिश्चित करना:** सरकारों से संवाद स्थापित करना, नीतिगत सिफारिशें प्रस्तुत करना और विधि-निर्माण में भाग लेना।
- **जनहित याचिका (PILs):** न्यायिक निर्णयों को प्रभावित करना, जैसे– दिल्ली वाहन प्रदूषण मामला (2015) जिसने **BS-VI उत्सर्जन मानकों** को लागू करने का मार्ग प्रशस्त किया।
- **नीति निर्माण:** WWF इंडिया जैसे **गैर-सरकारी संगठन (NGOs)** वन्यजीव और वनों के संरक्षण संबंधी नीतियों में योगदान देते हैं।

पर्यावरण संरक्षण में भूमिका:

- **प्रत्यक्ष कार्यवाही:** वनीकरण में भाग लेना, नदियों की सफाई करना तथा विलुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण संबंधी पहलों में भागीदारी करना।
- **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग:** वैश्विक समझौतों के क्रियान्वयन में सहयोग देना, जैसे– भारत में पेरिस जलवायु समझौते का अनुपालन।

चुनौतियाँ:

- **राजनीतिक प्रतिरोध** और विकास एजेंडा के साथ टकराव।
- **औद्योगिक प्रदूषण,** बृहद परियोजनाओं पर समर्थन को सीमित करता है।
- स्थानीय पहल के लिये **सीमित वित्तपोषण और संसाधन।**
- **विकास एवं संरक्षण प्राथमिकताओं के बीच संतुलन** बनाना।
- अनेक समूहों के बीच बिखराव, जिससे सामूहिक प्रभाव घटता है।

निष्कर्ष:

भारत की **पर्यावरणीय शासन-व्यवस्था** में **पर्यावरणीय दबाव समूह** महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये जागरूकता, जवाबदेहिता और **पारिस्थितिकीय संरक्षण** को मज़बूत करते हैं। **वंदना शिवा** के शब्दों में, **"पर्यावरणीय सक्रियता केवल प्रकृति के बारे में नहीं है, यह न्याय, लोकतंत्र और अस्तित्व के बारे में है।"** इन समूहों की क्षमता का सशक्तीकरण तथा सरकार और नागरिकों के साथ सहयोग को प्रोत्साहित करना **सतत् एवं समावेशी विकास** सुनिश्चित करता है।

प्रश्न 16. संसाधनों के स्वामित्व पैटर्न में असमानता गरीबी का एक प्रमुख कारण है। 'गरीबी के विरोधाभास' के संदर्भ में चर्चा कीजिये। (250 शब्द)

> **हल करने का दृष्टिकोण:**
>
> - **परिचय:** "गरीबी के विरोधाभास" को परिभाषित कीजिये - प्रचुर संसाधनों और व्यापक गरीबी का सह-अस्तित्व।
>   - आप परिचय को बेहतर बनाने के लिये आरेख, चित्र आदि का उपयोग कर सकते हैं।
> - **मुख्य भाग:** विरोधाभास, संसाधनों के स्वामित्व में असमानता के प्रमुख पहलुओं का उल्लेख कीजिये और आगे की राह को स्पष्ट कीजिये।
>   - अपने तर्कों के समर्थन में आँकड़े और रिपोर्ट (जैसे– ऑक्सफैम, नीति आयोग) उद्धृत करें।
> - **निष्कर्ष:** इस विचार के साथ निष्कर्ष लिखिये कि गरीबी एक प्रणालीगत मुद्दा है, न कि व्यक्तिगत विफलताएँ और साथ ही एक दूरदर्शी दृष्टिकोण भी दीजिये।

उत्तर: गरीबी का विरोधाभास उस स्थिति को कहा जाता है जहाँ प्रचुर संसाधन उपलब्ध होते हुए भी व्यापक गरीबी बनी रहती है। इसका कारण संसाधनों की कमी नहीं बल्कि असमान स्वामित्व और कमज़ोर संस्थाएँ होती हैं, जो संपत्ति को घरेलू परिसंपत्ति में बदलने से रोकती हैं। उदाहरण के लिये, खनिज-समृद्ध राज्य, जैसे– झारखंड, ओडिशा और छत्तीसगढ़ विशाल संसाधनों के बावजूद गरीब बने हुए हैं।

प्रचुर संसाधन + असमान स्वामित्व + कमज़ोर संस्थाएँ ⟶ गरीबी का विरोधाभास

मुख्य भाग:

गरीबी के विरोधाभास के प्रमुख पहलू

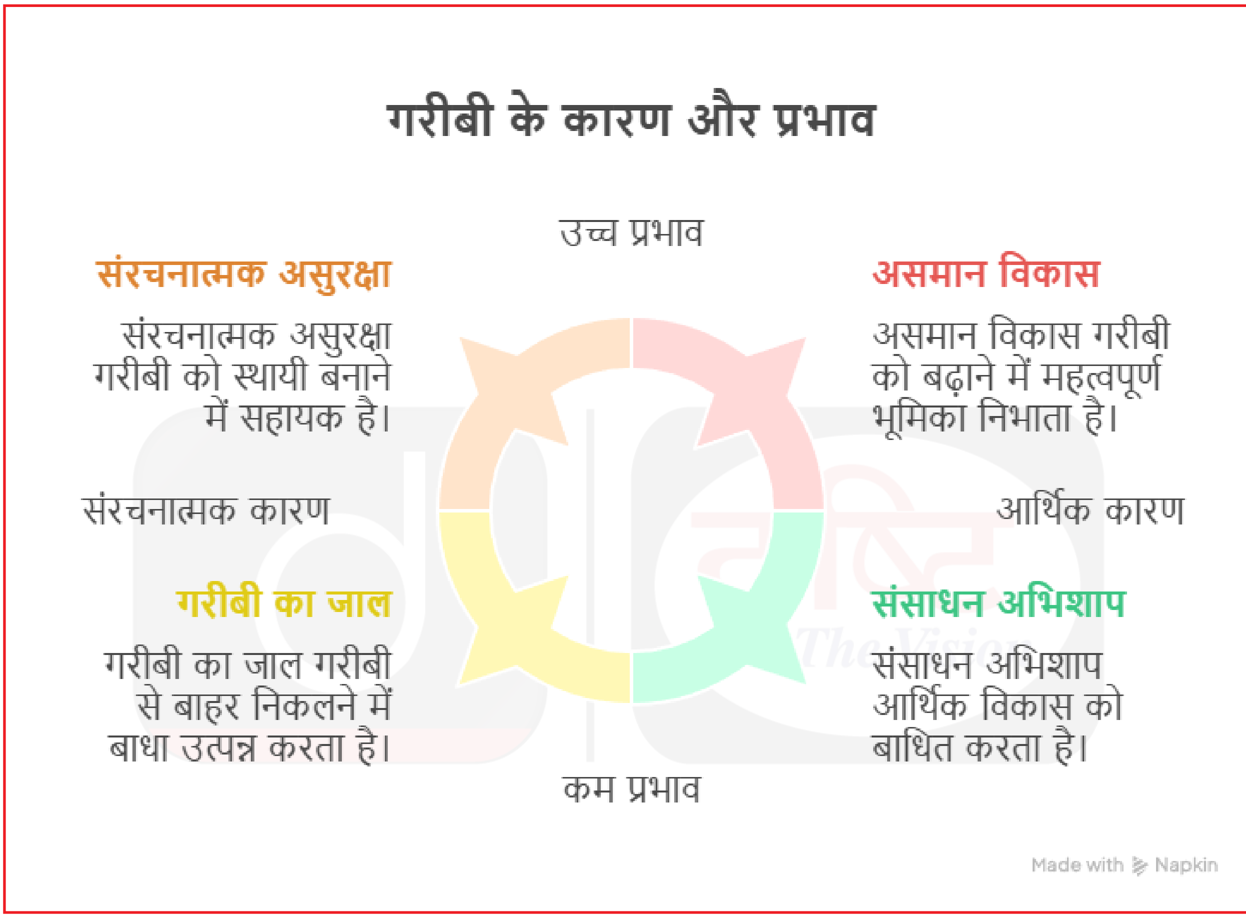

संसाधनों के स्वामित्व में असमानता

- **धन का संकेंद्रण:** भारत के सबसे अमीर **1% लोगों के पास देश की कुल संपत्ति का 40% से अधिक हिस्सा** है (ऑक्सफैम इंडिया, 2023), जो बहुसंख्यक जनता की संपत्ति तक पहुँच को सीमित करता है और गरीबी को बनाए रखता है।
- **ग्रामीण-शहरी अंतर:** स्वास्थ्य सेवाओं के बुनियादी ढाँचे का एक बड़ा हिस्सा शहरी क्षेत्रों में केंद्रित है, जिससे ग्रामीण आबादी को अपर्याप्त सेवाएँ प्राप्त होती हैं जिससे उत्पन्न स्वास्थ्य संबंधी खर्चों से यह आबादी वित्तीय रूप से असुरक्षित रहती है।
- **असमान भूमि स्वामित्व:** उपनिवेशकालीन ज़मींदारी प्रणाली की विरासत भूमि वितरण को प्रभावित करती है, जिससे कई किसानों के पास सतत् आजीविका के लिये पर्याप्त भूमि नहीं है (ग्रामीण विकास मंत्रालय, 2011)।
- **वित्तीय पूंजी की कमी: प्रधानमंत्री जन-धन योजना** जैसी पहलों के माध्यम से अधिक बैंक खाते होने के बावजूद ग्रामीण गरीबों में से कई अभी भी महँगे अनौपचारिक ऋणदाताओं पर निर्भर हैं और निवेश करने के लिये पूंजी की कमी से त्रस्त हैं (विश्व बैंक, 2021)।
- **असमान आर्थिक वृद्धि:** राज्य जीडीपी में वृद्धि पैटर्न असंतुलित है। कुछ राज्यों, जैसे– गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र को अधिक वृद्धि प्राप्त हुई है, जबकि प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध राज्यों, जैसे– ओडिशा, झारखंड आदि को कम लाभ प्राप्त हो रहा है। इसके अतिरिक्त, चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होने के बावजूद, लगभग 11.28% भारतीय बहुआयामी गरीबी में जीवन यापन कर रहे हैं (नीति आयोग, 2023), जो दर्शाता है कि विकास के लाभ समान रूप से वितरित नहीं हो रहे हैं।

- **राजनीतिक अर्थव्यवस्था:** खनन पट्टों और विशेष आर्थिक क्षेत्रों (SEZs) के लिये भूमि जैसे संसाधनों का आवंटन प्राय: स्थानीय समुदायों की अपेक्षा राजनीतिक अभिजात वर्ग और कंपनियों के पक्ष में होता है।

आगे की राह

- **भूमि एवं स्वामित्व सुधार:** छोटे किसानों को सुरक्षित भूमि अधिकार प्रदान करने से उत्पादकता बढ़ती है। **डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (DILRMP)** जैसी योजनाएँ भूमि रिकॉर्ड को डिजिटल रूप में परिवर्तित कर **पारदर्शिता** और **विवादों से बचाव** सुनिश्चित कर रही हैं।
- **स्थानीय अधिकार एवं लाभ साझाकरण:** समुदायों को उनके संसाधनों पर अधिकार देने से यह सुनिश्चित होता है कि वे लाभ के भागीदार हैं। **वन अधिकार अधिनियम (FRA), 2006** वन्य क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों की भूमि और आजीविका को सुरक्षित करता है।
- **क्षमता विस्तार:** शिक्षा, स्वास्थ्य और कौशल में निवेश व्यक्तियों को सशक्त बनाता है। **आयुष्मान भारत योजना** स्वास्थ्य कवरेज प्रदान करती है, जबकि **प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना (PMKVY)** युवाओं को रोज़गार उपलब्ध कराती है।
- **विविधीकरण एवं मज़बूत संस्थान:** किसी एक आर्थिक क्षेत्र पर निर्भरता कम करना अत्यंत आवश्यक है। **मेक इन इंडिया** जैसी पहलें विनिर्माण को बढ़ावा देती हैं और अर्थव्यवस्था को सेवा क्षेत्र से भिन्न बनाती हैं। पूंजी और तकनीकी-गहन क्षेत्रों के अतिरिक्त, भारत को **श्रम-गहन क्षेत्रों,** जैसे– विभिन्न **MSMEs, वस्त्र, चमड़ा, खाद्य प्रसंस्करण, मत्स्य पालन और पशुपालन** पर भी ज़ोर देना चाहिये, जो मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों की बड़ी आबादी को शामिल करते हैं।
- **संपत्ति कर:** थॉमस पिकेटी से प्रेरित होकर अत्यधिक धन संकेंद्रण से निपटने और सार्वजनिक निवेश को वित्तपोषित करने के लिये एक प्रगतिशील संपत्ति कर की संभावना तलाशी जा सकती है।

जैसा कि मार्क रैंक जैसे विद्वान तर्क करते हैं, गरीबी व्यक्तिगत असफलताओं के स्थान पर **सामाजिक और प्रणालीगत कमज़ोरियों** को दर्शाती है, इसलिये इस विरोधाभास को सुलझाने के लिये आवश्यकता है कि **संपन्नता बिना समानता के** की स्थिति से हटकर **सभी के लिये समावेशी संसाधन स्वामित्व** की ओर केंद्रित की जाए।

प्रश्न 17. "समकालीन विकास मॉडलों में निर्णय लेने और समस्या-समाधान की ज़िम्मेदारियाँ सूचना के स्रोत के निकट स्थित नहीं होतीं और कार्यान्वयन विकास के उद्देश्यों को विफल कर देता है।" आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** प्रश्न में निहित मूल विषयों को परिभाषित कीजिये। निर्णयन प्रक्रिया में लोगों को शामिल किया जाना चाहिये, लेकिन केंद्रीकरण के कारण कई विकास मॉडलों में अलगाव उत्पन्न हो जाता है।
- **मुख्य भाग:** स्पष्ट कीजिये कि स्थानीय स्तर पर निर्णयन प्रक्रिया क्यों महत्त्वपूर्ण है और केंद्रीकृत मॉडल किस प्रकार विकास लक्ष्यों को कमज़ोर करते हैं।
  - आलोचनात्मक मूल्यांकन एवं संतुलित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता को प्रदर्शित कीजिये।
- **निष्कर्ष:** दीर्घकालिक विकास के लिये केंद्रीय विशेषज्ञता द्वारा समर्थित विकेंद्रीकृत निर्णयन के महत्त्व पर बल देते हुए निष्कर्ष लिखिये।

उत्तर: विकास सर्वाधिक प्रभावी तब होता है जब निर्णयन प्रक्रिया में उन लोगों को शामिल किया जाता है जिन पर उनका प्रभाव पड़ता है, जहाँ स्थानीय वास्तविकताएँ, जानकारी और प्रतिपुष्टि समाधान को आकार दे सकती हैं। हालाँकि अनेक समकालीन मॉडलों में निर्णय-निर्माण की शक्ति सरकार या केंद्रीय संस्थाओं के उच्च स्तरों पर केंद्रित रहती है। इसमें नीति-निर्माण और ज़मीनी स्तर पर क्रियान्वयन के बीच असंगति उत्पन्न होती है, जिससे समावेशिता एवं स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

स्थानीय स्तर पर निर्णयन प्रक्रिया क्यों महत्त्वपूर्ण है?

- **संदर्भ सुग्राहिता:** स्थानीय समुदाय अपने संसाधनों के संबंध में, सामाजिक-सांस्कृतिक गतिशीलता एवं कमज़ोरियों को दूरस्थ नीति निर्माताओं की तुलना में बेहतर समझ रखते हैं।
  - ***उदाहरण:*** *महाराष्ट्र में जलग्रहण प्रबंधन तब सफल हुआ जब पंचायतों ने इसमें अग्रणी भूमिका निभाई (रालेगण सिद्धि)।*
- **जवाबदेहिता एवं प्रतिक्रिया:** निकटता स्थानीय स्तर पर अधिकारियों को लोगों के प्रति अधिक जवाबदेह बनाती है।
  - ***उदाहरण:*** *केरल के जन योजना अभियान ने ग्राम सभाओं को योजना बनाने में सशक्त बनाया, जिससे बेहतर स्वास्थ्य और शिक्षा परिणाम सुनिश्चित हुए।*
- **संसाधनों का कुशलतापूर्ण उपयोग:** स्थानीयकृत योजना से रिसाव कम होता है और प्राथमिकता-आधारित व्यय सुनिश्चित होता है।
  - ***उदाहरण:*** *मनरेगा उन राज्यों में बेहतर काम करता है जहाँ पंचायतें सशक्त हैं।*

- **नागरिक सहभागिता:** विश्वास का निर्माण करती है, अलगाव को कम करती है और लोकतांत्रिक वैधता को बढ़ाती है।

केंद्रीकृत/प्रत्यायोजित मॉडल विकास लक्ष्यों को किस प्रकार विफल करते हैं?

- **एक ही योजना सभी के लिये उपयुक्त दृष्टिकोण:** केंद्र द्वारा डिज़ाइन किये गए प्रमुख कार्यक्रम अक्सर स्थानीय विविधता की उपेक्षा करते हैं।
  - ***उदाहरण:*** *प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत एक समान आवास डिज़ाइन प्राय: सांस्कृतिक और जलवायु संबंधी आवश्यकताओं से मेल नहीं खाती।*

केंद्रीकरण → वास्तविक अंतर → दक्षता, प्रतिक्रिया-क्षमता और स्थिरता में कमी

- **सूचना अंतराल:** उच्च अधिकारी समय पर और सटीक ज़मीनी डेटा से वंचित रहते हैं, जिसके कारण संसाधनों का त्रुटिपूर्ण आवंटन होता है।
- **कार्यान्वयन बाधाएँ:** स्थानीय अधिकारी प्राय: केवल "आदेशों का पालन" करते हैं, नवाचार के लिये उनके पास बहुत कम अवसर होते हैं।
- **अभिजात वर्ग का कब्ज़ा:** जब निर्णय उच्च स्तर पर लिये जाते हैं, तो स्थानीय लाभार्थियों को प्रभावित करना कठिन हो जाता है।

समालोचनात्मक मूल्यांकन

- **संतुलन की आवश्यकता:** स्थानीयकरण से संकीर्णता, क्षमता की कमी और असमान मानकों का खतरा हो सकता है।
  - ***उदाहरण:*** *कुछ ग्राम पंचायतों में जटिल बुनियादी ढाँचा परियोजनाओं के लिये तकनीकी विशेषज्ञता का अभाव हो सकता है।*
- **प्रौद्योगिकीय अंतराल:** आधार-सक्षम **डी.बी.टी.**, **पी.एम.-गति शक्ति**, **जी.ई.एम. पोर्टल** जैसे प्लेटफॉर्म केंद्रीय स्तर पर पर्यवेक्षण सुनिश्चित करते हैं, साथ ही स्थानीय स्तर पर दक्षता भी बनाए रखते हैं।
- **वैश्विक दृष्टिकोण:** बहुकेंद्रीय शासन पर **एलिनोर ओस्ट्रोम** का कार्य दर्शाता है कि न तो अति केंद्रीकरण और न ही पूर्ण विकेंद्रीकरण काम करता है; स्तरित शासन लचीलापन सुनिश्चित करता है।
- **भारतीय संदर्भ: 73वें और 74वें संविधान संशोधन** ने दस्तावेज़ों पर विकेंद्रीकरण की व्यवस्था तो की है, परंतु राज्य प्राय: 3Fs (Funds, Functions, Functionaries) के वास्तविक क्रियान्वयन में असफल रहते हैं।

आगे की राह

- **स्थानीय शासन को मज़बूत करना:** प्रशिक्षण, डिजिटल उपकरण, पंचायतों/शहरी स्थानीय निकायों के लिये समर्पित कैडर।
- **शक्तियों का कार्यात्मक हस्तांतरण:** 73वें/74वें संशोधन को वास्तविकता में क्रियान्वित करना।
- **सहभागी नियोजन:** ग्राम सभाओं एवं वार्ड समितियों का सुदृढ़ीकरण।
- **हाइब्रिड मॉडल:** केंद्रीय दृष्टिकोण + राज्य समन्वय + स्थानीयकृत योजना और कार्यान्वयन।

निष्कर्ष:

विकास तभी सफल होता है जब निर्णय उतनी ही सहजता से नीचे तक पहुँचते हैं जितने संसाधन पहुँचते हैं। अति-केंद्रीकरण उत्तरदायित्व को बाधित करता है, जबकि असीमित विकेंद्रीकरण अकुशलता का कारण बन सकता है। एक **बहु-केंद्रीय, सहभागितापरक एवं क्षमता-आधारित मॉडल**—जहाँ निर्णय-निर्माण सूचना के स्रोत के निकट स्थित हो, पर उच्च-स्तरीय विशेषज्ञता से समर्थित भी हो—भारत की विकास-यात्रा के लिये सर्वश्रेष्ठ मार्ग प्रदान करता है।

प्रश्न 18. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग को डिजिटल युग में बच्चों के सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान करना होगा। मौजूदा नीतियों की जाँच कीजिये और इस मुद्दे से निपटने के लिये आयोग द्वारा शुरू किये जा सकने वाले उपायों के सुझाव दीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** NCPCR और बाल अधिकारों के संरक्षण हेतु उसके अधिदेश का संक्षिप्त परिचय लिखिये, विशेष रूप से डिजिटल युग के संदर्भ में।
- **मुख्य भाग:** बच्चों से संबंधित डिजिटल युग की चुनौतियों का उल्लेख कीजिये, मौजूदा नीतियों और कमियों की जाँच कीजिये और NCPCR द्वारा शुरू किये जा सकने वाले उपायों को बताइये।
- **निष्कर्ष:** अनुच्छेद 39(e) और (f) जैसे DPSP के अनुरूप, बाल अधिकारों के संरक्षण के लिये विधिक सुधार और डिजिटल साक्षरता में NCPCR की भूमिका पर प्रकाश डालिये।

उत्तर: डिजिटल युग ने एक ओर जहाँ अधिगम एवं पारस्परिक जुड़ाव के नए अवसर सृजित किये हैं, वहीं दूसरी ओर इसने बच्चों की सुरक्षा और कल्याण के लिये अभूतपूर्व चुनौतियाँ भी प्रस्तुत की हैं। **बाल अधिकारों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय आयोग (NCPCR),**

जिसे *बाल अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005* के तहत स्थापित किया गया था, इस बदलते परिदृश्य में बाल अधिकारों का संरक्षण करने के लिये विशिष्ट रूप से सक्षम है।

डिजिटल युग में बच्चों के समक्ष चुनौतियाँ

- **ऑनलाइन यौन शोषण:** बाल यौन शोषण सामग्री (CSAM) और ग्रूमिंग की व्यापक समस्या, जो प्रायः सीमापार से उत्पन्न होती है।
- **साइबरबुलिंग और उत्पीड़न:** बच्चों में गंभीर मानसिक तनाव, दुष्चिंता और अवसाद का कारण बनना।
- **गोपनीयता का उल्लंघन:** प्लेटफॉर्म द्वारा बच्चों की व्यक्तिगत जानकारी का अनधिकृत डाटा संग्रह, प्रोफाइलिंग और दुरुपयोग।
- **हानिकारक सामग्री के संपर्क में आना:** हिंसा, आत्म-क्षति को बढ़ावा देने वाली सामग्री, घृणा भाषण तथा आयु-अनुपयुक्त सामग्री तक पहुँच।
- **डिजिटल लत:** अत्यधिक स्क्रीन समय से मानसिक स्वास्थ्य, शारीरिक विकास और शैक्षणिक प्रदर्शन पर नकारात्मक प्रभाव।
- **भ्रामक और गलत जानकारी:** बच्चों के लिये सत्य और असत्य में अंतर कर पाना कठिन, जिससे भ्रम या उग्र विचारधारा की ओर झुकाव।
- **सेक्सटॉर्शन और वित्तीय धोखाधड़ी:** छेड़छाड़ की गई छवियों/वीडियो के माध्यम से दबाव डालना और नाबालिगों को निशाना बनाकर ऑनलाइन वित्तीय धोखाधड़ी करना।

मौजूदा नीतियाँ और उनकी कमियाँ

- **सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 और IT नियम, 2021:** CSAM पर प्रतिबंध लगाते हैं और मध्यस्थों की जवाबदेही अनिवार्य करते हैं। फिर भी आयु सत्यापन संबंधी उपाय अपर्याप्त हैं, जो अपराधियों के विरुद्ध अपर्याप्त प्रवर्तन को दर्शाता है।
- **पॉक्सो अधिनियम, 2012:** यौन शोषण के विरुद्ध एक सशक्त विधिक ढाँचा उपलब्ध कराता है, किंतु साइबर जाँच में प्रशिक्षित जनशक्ति और डिजिटल फॉरेंसिक उपकरणों का अभाव है।
- **डिजिटल व्यक्तिगत डाटा संरक्षण (DPDP) अधिनियम, 2023:** बच्चों के डाटा संरक्षण को मज़बूत बनाता है और निगरानी-आधारित विज्ञापन पर रोक लगाता है। हालाँकि, इसका कार्यान्वयन अभी प्रारंभिक अवस्था में है और वैश्विक प्लेटफॉर्म प्रायः आवश्यकताओं से अछूते हैं।
- **किशोर न्याय अधिनियम, 2015:** बाल कल्याण हेतु व्यापक ढाँचा प्रदान करता है, किंतु डिजिटल कमज़ोरियों पर अधिकांशतः मौन है।
- **NCPCR के 2019 के ऑनलाइन बाल संरक्षण हेतु दिशा-निर्देश:** उपयोगी हैं परंतु सलाहकारी स्वरूप के कारण इनमें विधिक बाध्यता (statutory backing) का अभाव है।

NCPCR हेतु सुझावित उपाय

- **नीतिगत समर्थन (Policy Advocacy):** एक समर्पित ऑनलाइन बाल संरक्षण कानून, जिसमें प्लेटफॉर्मों पर लागू होने वाली बाध्यकारी ज़िम्मेदारियाँ, आयु-उपयुक्त डिज़ाइन कोड और अनिवार्य आयु-पुष्टि (age-gating) की व्यवस्था हो।
- **क्षमता निर्माण (Capacity Building):** पुलिस, न्यायपालिका और बाल कल्याण अधिकारियों के लिये डिजिटल जाँच एवं साइबर फॉरेंसिक में विशेष प्रशिक्षण विकसित करना।
- **जागरूकता और साक्षरता (Awareness & Literacy):** अभिभावकों, शिक्षकों और विद्यार्थियों को लक्षित करते हुए राष्ट्रव्यापी अभियान चलाना तथा विद्यालयों में अनिवार्य डिजिटल नागरिकता पाठ्यक्रम शामिल करना।
- **बाल-अनुकूल शिकायत प्रणाली (Child-Friendly Reporting):** त्वरित कार्रवाई के लिये साइबर अपराध पोर्टलों के साथ *1098 चाइल्डलाइन* के एकीकरण को मज़बूत करना तथा सुरक्षित, गुमनाम रिपोर्टिंग प्रणाली सुनिश्चित करना।
- **उद्योग सहभागिता (Industry Engagement):** सोशल मीडिया और EdTech प्लेटफॉर्मों के साथ मिलकर **"सुरक्षा-आधारित डिज़ाइन"** वाले उत्पाद, बेहतर सामग्री नियमन तथा पारदर्शी अनुपालन ऑडिट सुनिश्चित करना।
- **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग (International Collaboration):** UNICEF, INTERPOL तथा अन्य वैश्विक एजेंसियों के साथ मिलकर सीमापार बाल शोषण नेटवर्क से निपटना।

निष्कर्ष:

NCPCR डिजिटल युग में बच्चों के अधिकारों की रक्षा करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसके लिये विधिक सुधार, तकनीकी नवाचार और डिजिटल साक्षरता आवश्यक है। अनुच्छेद 39 (e) और (f) में परिकल्पित बच्चों के डिजिटल अधिकारों का संरक्षण उनकी गरिमा और राष्ट्रीय प्रगति दोनों के लिये अनिवार्य है।

प्रश्न 19. "ऊर्जा सुरक्षा भारत की विदेश नीति का मुख्य स्तंभ है और यह मध्य पूर्वी देशों में भारत के व्यापक प्रभाव से जुड़ा हुआ है।" आप आने वाले वर्षों में भारत की विदेश नीति की दिशा के साथ ऊर्जा सुरक्षा को कैसे एकीकृत करेंगे? (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** मध्य पूर्व से कच्चे तेल और LPG के आयात पर भारत की अत्यधिक निर्भरता और खाड़ी क्षेत्र में भारत के भू-राजनीतिक प्रभाव को बढ़ाने में इसकी भूमिका को देखते हुए, ऊर्जा सुरक्षा को भारत की विदेश नीति के एक प्रमुख स्तंभ के रूप में रेखांकित कीजिये।
- **मुख्य भाग:** ऊर्जा सुरक्षा को विदेश नीति के साथ एकीकृत करते हुए बताएँ कि ऊर्जा सुरक्षा को "किंगपिन" क्यों माना जाता है।
  - आगे की राह के रूप में जोखिम प्रबंधन और हेजिंग का उल्लेख कीजिये।
- **निष्कर्ष:** भारत की विदेश नीति को सुदृढ़ करने, आपूर्ति सुनिश्चित करने और भारत को प्रमुख ऊर्जा केंद्र के रूप में स्थापित करने तथा मध्य पूर्व में इसके प्रभाव को बढ़ाने में ऊर्जा सुरक्षा की भूमिका पर ज़ोर दीजिये।

उत्तर: ऊर्जा सुरक्षा ने लंबे समय से भारतीय विदेश नीति की दिशा को प्रभावित किया है यह रणनीतिक साझेदारियों, व्यापार ढाँचे, समुद्री परिनियोजन एवं प्रवासन नीति को आकार देती है। नवीकरणीय ऊर्जा को विस्तार देने के बावजूद भारत की ऊर्जा संरचना में हाइड्रोकार्बन अब भी प्रमुख बना हुआ है, परिणामस्वरूप ऊर्जा सुरक्षा के संदर्भ में मध्य पूर्व (पश्चिम एशिया) क्षेत्र की भूमिका महत्त्वपूर्ण बनी रहेगी। हालाँकि अल्पकालिक आपूर्ति सुरक्षा को दीर्घकालिक ऊर्जा संक्रमण के साथ जोड़ना एक बड़ी चुनौती है, जिससे भारत की इस क्षेत्र में सामरिक स्थिति और प्रभावशीलता बढ़ सके।

क्यों ऊर्जा सुरक्षा भारतीय विदेश नीति की "किंगपिन (नीति को आकार देने वाला महत्वपूर्ण कारक)" बनी हुई है?

- **आयात पर निर्भरता:** भारत अपने कच्चे तेल का लगभग **85% आयात करता है**, जिसमें बड़ा हिस्सा पश्चिम एशिया से आता है।
  - o**LPG आयात:** भारत 60% LPG आयात करता है, जिसमें से **90% पश्चिम एशियाई देशों** से आता है।
- **रिफाइनिंग और निर्यात केंद्र:** भारत की जटिल रिफाइनरियाँ निरंतर कच्चे तेल की आपूर्ति पर निर्भर हैं; पेट्रोलियम उत्पाद भारत के प्रमुख निर्यात साधन हैं।
- **आर्थिक स्थिरता:** तेल की कीमतों में बढ़ोतरी CAD (चालू खाता घाटा) को बढ़ाती है, रुपये पर दबाव डालती है और मुद्रास्फीति को बढ़ाती है, इससे आपूर्ति और कीमतों की स्थिरता विदेश नीति के अपरिहार्य कारक बन जाते हैं।

विदेश नीति के साथ ऊर्जा सुरक्षा का एकीकरण

(1) हाइड्रोकार्बन की विश्वसनीय आपूर्ति सुनिश्चित करना

- **दीर्घकालिक आपूर्ति हेतु अनुबंध एवं वैकल्पिक आपूर्ति:** UAE, सऊदी अरब, कुवैत, इराक और कतर के साथ कच्चे तेल/LNG के दीर्घकालिक अनुबंधों का नवीनीकरण और विविधीकरण करना, जिनमें वैकल्पिक आपूर्ति और मूल्य स्थिरीकरण आदि कारक शामिल हों।
- **इक्विटी ऑयल और अपस्ट्रीम स्टेक:** ONGC विदेश/कंसोर्टियम की हिस्सेदारी मध्य-पूर्वी अपस्ट्रीम ब्लॉकों में बढ़ाना ताकि "इक्विटी बैरल" सुरक्षित किये जा सकें।
- **रणनीतिक पेट्रोलियम भंडार (SPR):** खाड़ी साझेदारों के साथ SPR का संयुक्त भरण करना और भारत में उनके कच्चे तेल के लिये वाणिज्यिक भंडारण की संभावनाएँ तलाशना, जिससे इनकी स्थिर आपूर्ति भारत की आर्थिक स्थिरता को अक्षुण्ण रखे।

(2) समुद्री एवं अन्य रणनीतिक मार्गों की सुरक्षा

- **समुद्री रणनीति:** सागर (SAGAR) के तहत हॉर्मुज़ – बाब-अल-मंदेब – लाल सागर समुद्री मार्गों को प्राथमिकता देना; क्षेत्रीय नौसेनाओं के साथ एंटी-पायरेसी, नौवहन सुरक्षा और वाइट-शिपिंग समझौतों को सुदृढ़ करना।
- **स्थल/वैकल्पिक गलियारे:** गल्फ–लेवेंट–मेडिटेरेनियन कनेक्टर्स जैसे मल्टी-मॉडल संपर्क मार्गों को सहयोग प्रदान करना और महत्त्वपूर्ण बंदरगाहों में भारत की हिस्सेदारी बढ़ाना ताकि पारगमन जोखिम को घटाया जा सके।

(3) रणनीतिक संबंध बेहतर करने के लिये ऊर्जा का उपयोग

- **दो-तरफा निवेश:** खाड़ी के SWF/ऊर्जा क्षेत्र की बड़ी कंपनियों (ADNOC, अरामको, मुबाडाला) को भारतीय रिफाइनिंग, पेट्रोकेमिकल्स, गैस टर्मिनलों और सिटी-गैस नेटवर्क में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित करना; उनकी अपस्ट्रीम और CCUS परियोजनाओं में भारतीय EPC/सेवाएँ प्रदान करना।
- **रुपया/दिरहम बिलिंग और फिनटेक प्रणाली:** पेट्रोलियम व्यापार के लिये डॉलर पर निर्भरता को कम करना, जिससे अस्थिरता बढ़े।

(4) हरित संक्रमण (Green Transition) के साथ तेल आपूर्ति

- **हरित ऊर्जा:** UAE/सऊदी के साथ ग्रीन हाइड्रोजन/अमोनिया आपूर्ति श्रृंखलाओं का सह-विकास (ऑफटेक MOU, भारतीय बंदरगाहों पर बंकिंग, मानक निर्धारण)।
- **सोलर और ग्रिड कनेक्शन:** ISA नेतृत्व में सौर निर्माण का विस्तार करना और गल्फ–इंडिया पावर लिंक पर विचार करना ताकि पिक लोड संतुलित किया जा सके।

- **प्रौद्योगिकी साझेदारी:** CCUS, मीथेन न्यूनीकरण, उन्नत रिकवरी और डीज़ल-संचालित नवीकरणीय परियोजनाओं में संयुक्त जलवायु लक्ष्यों को उत्पादक प्राथमिकताओं के साथ संरेखित करना।

(5) भारत की भूमिका को क्षेत्रीय ऊर्जा केंद्र के रूप में परिष्कृत करना

- **कच्चे तेल से तैयार उत्पाद (Crude-to-Chemicals Pivot):** उच्च-मूल्य पेट्रोकेमिकल्स का विस्तार करने के लिये लगातार कच्चे तेल की आपूर्ति को सुरक्षित करना, भारत के रिफाइनिंग उद्योग का लाभ उठाकर ग्रेड अंतर का लाभ लेना और उत्पादों का एशिया/अफ्रीका में पुन: निर्यात करना।
- **मूल्य कूटनीति (Price Diplomacy):** उत्पादन दिशा-निर्देशों, पारदर्शी मानकों और आपातकालीन वैकल्पिक आपूर्ति हेतु उत्पादक देशों के साथ व्यापक सहयोग।

जोखिम प्रबंधन और हेजिंग

- **आपूर्ति संकट (Supply Shocks):** आपूर्ति के वैकल्पिक स्रोतों को बनाए रखना (मध्य पूर्व + अफ्रीका + अमेरिका), अनुबंधों को चरणबद्ध करना और संतुलित स्पॉट क्रय करना।
- **प्रतिबंध/भू-राजनीति (Sanctions/Geopolitics):** अनुपालन-प्रवीण व्यापार ढाँचे तैयार करना; सभी पक्षों के साथ संवाद बनाए रखना ताकि विकल्पता (optionality) सुरक्षित रहे।
- **कार्बन टैरिफ (Carbon Tariffs):** कुल ईंधन आपूर्ति में हरित उर्जा को शामिल करना (उच्च स्तरीय उत्सर्जन कम करना) और स्वच्छ ईंधन का विस्तार करना ताकि भविष्य में CBAM जैसी नीतियों का प्रभाव कम किया जा सके।
- **स्रोतों में बदलाव (Shift in Sourcing):** विविधीकरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। पश्चिम एशिया यद्यपि अभी भी प्रमुख है, किंतु कुल आपूर्ति में वर्ष 2023-24 में इसका हिस्सा लगभग 46% रह गया, जो ऐतिहासिक रूप से न्यूनतम है। इस बीच, रूस अब भारत के कच्चे तेल की 39% आपूर्ति करता है, जिससे यह सबसे बड़ा एकल स्रोत क्षेत्र बन गया है।

निष्कर्ष:

विदेश नीति के केंद्र में ऊर्जा को रखना आवश्यक है। इसके लिये खाड़ी क्षेत्र से हाइड्रोकार्बन की आपूर्ति सुनिश्चित करना, समुद्री मार्गों को सुरक्षित बनाना, स्वच्छ ऊर्जा के लिये पूंजी और प्रौद्योगिकी का विकास तथा भारत को रिफाइनिंग-टू-पेट्रोकेमिकल और हरित ऊर्जा स्रोतों का केंद्र बनाना जरूरी है। यह कदम न केवल भारत की विकास यात्रा को सुरक्षित करेंगे, बल्कि मध्य पूर्व में उसकी रणनीतिक स्थिति को भी मजबूत बनाएंगे। इसका उद्देश्य किसी पर निर्भर होना नहीं, बल्कि ऐसी पारस्परिक निर्भरता बनाना है जो ऊर्जा संबंधों को स्थायी भू-राजनीतिक प्रभाव में परिवर्तित करे।

प्रश्न 20. "पूर्व और पश्चिम के बीच नाज़ुक असंतुलन और USA बनाम रूस-चीनी गठबंधन के बीच उलझन के कारण संयुक्त राष्ट्र में सुधार प्रक्रिया अभी भी अनसुलझी है।" इस संबंध में पूर्व-पश्चिम नीति टकरावों की जाँच और आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिये। (250 शब्द)

हल करने का दृष्टिकोण:

- **परिचय:** इस बात पर प्रकाश डालिये कि संयुक्त राष्ट्र सुधार, विशेष रूप से सुरक्षा परिषद् सुधार, पूर्व-पश्चिम टकरावों के कारण रुका हुआ है, मुख्य रूप से अमेरिकी नेतृत्व वाले पश्चिम और रूस-चीन गठबंधन के बीच।
- **मुख्य भाग:** पूर्व-पश्चिम नीतिगत टकरावों का उल्लेख कीजिये और संयुक्त राष्ट्र सुधार में रुकावट का कारण बताइये, साथ ही उनका समालोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत कीजिये।
- **निष्कर्ष:** यह रेखांकित कीजिये कि संयुक्त राष्ट्र सुधार इसकी प्रासंगिकता के लिये अत्यावश्यक है तथा वैश्विक दक्षिण के बीच गठबंधन निर्माण गति बनाए रखने के लिये महत्त्वपूर्ण है।

उत्तर: शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद से ही सुरक्षा परिषद में सुधार की मांगें निरंतर उठती रही हैं। वर्ष 1945 में निर्मित यह संस्था वर्तमान वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित करने में संघर्ष कर रही है। हालाँकि सुधार की प्रक्रिया पूर्व-पश्चिम नीतिगत टकरावों के कारण अवरुद्ध है, विशेषकर अमेरिकी नेतृत्व वाले पश्चिम और रूस-चीन गठबंधन के बीच, जो सुधार की समूची चर्चा पर हावी हैं।

पूर्व-पश्चिम नीतिगत टकराव

- **सुरक्षा परिषद का विस्तार**
  - अमेरिका भारत, जापान और जर्मनी का समर्थन करता है।
  - चीन जापान का विरोध करता है (द्वितीय विश्वयुद्ध की विरासत) और भारत का भी विरोध करता है (क्षेत्रीय प्रतिद्वंद्विता)।
  - *उदाहरण: अंतर-सरकारी वार्ताओं (IGN) में चीन का G4 प्रस्तावों का विरोध।*

- **वीटो राजनीति**
  - पश्चिम वीटो शक्ति को कम करने के लिये अनिच्छुक है।
  - रूस और चीन प्राय: पश्चिमी पहलों को रोकने के लिये वीटो का प्रयोग करते हैं।
  - उदाहरण: रूस ने सीरिया पर कई UNSC प्रस्तावों को वीटो किया; चीन ने वर्ष 2007 और 2021 में म्याँमार पर कार्रवाई को अवरुद्ध किया।
- **वैचारिक मतभेद**
  - पश्चिम लोकतंत्र, मानवाधिकार और "सुरक्षा की ज़िम्मेदारी" (Responsibility to Protect) को बढ़ावा देता है।
  - रूस-चीन संप्रभुता और हस्तक्षेप-निषेध पर बल देते हैं।
  - *उदाहरण: मानवीय संकट के बावजूद रूस और चीन ने सीरिया में पश्चिम समर्थित हस्तक्षेप का विरोध किया।*
- **भूराजनीतिक प्रतिद्वंद्विताएँ**
  - अमेरिका सुधार को उदारवादी व्यवस्था को सशक्त करने का साधन मानता है।
  - रूस-चीन बहुध्रुवीयता (multipolarity) को बढ़ावा देकर पश्चिमी प्रभुत्व का विरोध करते हैं।
  - *उदाहरण: यूक्रेन -संघर्ष — पश्चिम ने प्रतिबंधों का समर्थन किया, रूस–चीन ने UNSC की सहमति को अवरुद्ध किया।*

सुधार अनसुलझे क्यों हैं?

- **शून्य-योग गणना (एक पक्ष को लाभ होता है तो दूसरे पक्ष को उतना ही नुकसान):** प्रत्येक गुट सुधार को शक्ति-संतुलन में बदलाव मानता है। *उदाहरण: चीन एशियाई वर्चस्व बनाए रखने हेतु भारत की स्थायी सदस्यता का विरोध करता है।*
- **P5 की यथास्थिति में निहित हित (Status Quo Interests):** सभी स्थायी सदस्य अपनी विशिष्टता से लाभान्वित होते हैं। *उदाहरण: ब्रिटेन और फ्राँस बयानबाज़ी तो करते हैं, लेकिन ठोस समर्थन नहीं करते।*
- **उत्तर-दक्षिण विभाजन (North-South Divide):** विकासशील देश समता की मांग करते हैं। *उदाहरण: अफ्रीकी संघ की एज़ुलविनी सहमति (Ezulwini Consensus) जिसमें 2 स्थायी और 5 अस्थायी सीटों की मांग की गई।*
- **प्रक्रिया संबंधी प्रारूप का अभाव (Process Design):** सहमति-आधारित अंतर-सरकारी वार्त्ताएँ (IGN) प्रगति को बाधित करती हैं। *उदाहरण: वर्ष 2009 से प्रत्येक वर्ष IGN बैठकों के बावजूद कोई प्रारूप तैयार नहीं हुआ।*

समालोचनात्मक मूल्यांकन

- पूर्व-पश्चिम टकराव महत्त्वपूर्ण है, लेकिन **वास्तविक बाधा सामूहिक P5 विशेषाधिकार** हैं चाहे पश्चिम हो या पूर्व, कोई भी स्थायी सदस्य अपनी शक्ति को कम करने को तैयार नहीं।
- **उत्तर-दक्षिण विभाजन** सुधार को और जटिल बनाता है, क्योंकि अफ्रीका व लैटिन अमेरिका की मांगें प्राय: एशिया की आकांक्षाओं की विपरीतता को दर्शाती हैं।
  - कार्नेगी विशेषज्ञ स्टुअर्ट पैट्रिक का मानना है कि आज संयुक्त राष्ट्र का विभाजन मुख्यत: ग्लोबल नॉर्थ और साउथ के बीच है, न कि केवल पूर्व और पश्चिम के बीच।
- सुधार संबंधी मांगे प्राय: **प्रतीकात्मक** रह जाती हैं — P- 5 सदस्य सुधार का समर्थन तो करते हैं, पर व्यावहारिक कदमों को रोक देते हैं।
- इस प्रकार चुनौती केवल द्विध्रुवीय प्रतिद्वंद्विता नहीं, बल्कि स्वयं संयुक्त राष्ट्र प्रणाली में निहित एक संरचनात्मक कुलीनतंत्र (structural oligarchy) है।

निष्कर्ष:

संयुक्त राष्ट्र में सुधार की प्रक्रिया तात्कालिक आवश्यकता और ठहराव के मध्य अवरुद्ध है। P- 5 देशों के विशेषाधिकार और उत्तर–दक्षिण विभाजन ने इसे आगे बढ़ने से रोकने का कार्य किया है। कोफी अन्नान के शब्दों में, *"सुधार कोई विकल्प नहीं, बल्कि अनिवार्यता है।"* यदि यह विभाजन दूर नहीं हुआ तो 21वीं सदी की चुनौतियों से निपटने में संयुक्त राष्ट्र अप्रासंगिक होता जाएगा। ऐसे में भारत और वैश्विक दक्षिण के लिये G-4, L.69 समूह और अफ्रीकी संघ जैसे मंचों के सहयोग से गठबंधन बनाना आगे की प्रगति हेतु अत्यंत आवश्यक है।

■■■